डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी की

अन्तिम यात्रा

गुरुदत्त

(डॉ० मुखर्जी के सहबन्दी)

एक ऐतिहासिक दस्तावेज़

यात्रा का उद्देश्य

डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी की जीवन तथा राजनीतिक अन्तिम यात्रा का विवरण लिखते समय यह आवश्यक है कि उस कारण का उल्लेख कर दिया जाय जिसके लिए यह यात्रा की गई थी। अतः कश्मीर की समस्या, जिसको सुलझाना इस यात्रा का उद्देश्य था, इस पुस्तिका का प्रथम अध्याय बनना स्वाभाविक है।

जैसी छः सौ के लगभग अन्य देसी रियासतें ब्रिटिश काल के भारत में थीं, वैसी ही कश्मीर एक रियासत थी। स्वराज्य-प्राप्ति के पश्चात् जैसे प्रायः वे सब रियासतें भारत में विलीन हो गईं, वैसे कश्मीर नहीं हुआ। इसका कारण पंडित जवाहरलाल नेहरू का सर्व-विख्यात हठ ही था। उन्होंने श्री वल्लभ भाई पटेल को, जिनके हाथ में शेष भारतीय रियासतों की समस्या थी, कश्मीर की समस्या न देकर यह समस्या स्वयं सुलझाने के लिए अपने हाथों में रखी। जब-जब श्री पटेल से कश्मीर के विषय में बात करने का प्रयास किया गया, उन्होंने श्री नेहरू की ओर अँगुली से संकेत कर दिया और श्री नेहरू ने देश के किसी अन्य जानकार अथवा नेता की सम्मति लिये बिना कश्मीर के विषय में स्वयं ही अपनी नीति निर्धारित की।

जब महाराजा हरिसिंह और शेख अब्दुल्ला ने ये वक्तव्य दिए कि कश्मीर भारत के साथ मिलना चाहता है तो श्री नेहरू को चाहिए था कि वे इस रियासत के विषय में श्री पटेल को उचित कार्रवाई करने की स्वीकृति दे देते; परन्तु ऐसा न कर श्री नेहरू ने इस विषय को सर्वथा अपने हाथों में रखा और इस पर अपनी इच्छानुसार प्रयोग करने लगे, जिससे समस्या दिन-प्रतिदिन बिगड़ती गई। सर्वप्रथम पंडित नेहरू ने कश्मीर भारत का अंग हो या न हो, इस पर कश्मीर में जनमत-संग्रह (Plebiscite) करने की घोषणा कर दी। एक ओर तो शेख अब्दुल्ला को देश का नेता मान लिया और उसको कश्मीर का मुख्य मंत्री बनवाने का हठ किया एवं दूसरी ओर उसके कहने को भी अमान्य कर यह सिद्ध कर दिया कि वह वहाँ कुछ नहीं है। जूनागढ़ राज्य के भारत में सम्मिलित न होने पर जनमत हुआ था, परन्तु तब वहाँ की जनता के नेता श्री साँवलदास गांधी और वहाँ के नवाब में मतभेद था। कश्मीर में जनता के नेता शेख अब्दुल्ला और कश्मीर के महाराजा, दोनों कश्मीर को भारत में सम्मिलित करने के पक्ष में थे।

दूसरी भूल जो श्री नेहरू से कश्मीर के विषय में हुई वह कश्मीर के प्रश्न को यू० एन० ओ० में ले जाना था। तत्पश्चात् जिस विषय में यू० एन० ओ० में मामला ले

जाया गया था, उसको छोड़ कश्मीर के प्लैबिसाइट का विषय यू० एन० ओ० में उपस्थित होने दिया गया। यह स्मरण रखना चाहिए कि यू० एन० ओ० में भारत सरकार का दावा यह था कि कश्मीर पर, जो भारत का एक अंग बन चुका है, पाकिस्तान ने आक्रमण किया है। पहले तो पाकिस्तान ने माना नहीं कि उसने आक्रमण किया है। जब माना तो आक्रमणकारी सेनाओं को वापस किये बिना ही प्लैबिसाइट करने पर विचार होने लगा। पंडित नेहरू ने यू० एन० ओ० में इस विषय पर बात होने दी और स्वयं इस विषय में बातचीत में सहयोग दिया। परिणाम यह हुआ कि शेख अब्दुल्ला के मस्तिष्क में कश्मीर को स्वतन्त्र रखने का विचार उत्पन्न हो गया। लोगों ने पंडित नेहरू को सचेत किया, परन्तु नेहरू जी ने परिस्थिति को स्पष्ट न कर लीपा-पोती से काम लिया।

शेख मुहम्मद अब्दुल्ला ने १९५० में, पैरिस में, स्वतन्त्र कश्मीर का विचार सबसे पहले प्रकट किया था। कश्मीर भारत के साथ मिले अथवा पाकिस्तान के साथ, इस विषय में शेख साहब ने यह कहा कि एक तीसरा विचार भी है और वह यह कि कश्मीर स्वतन्त्र देश हो। इस पर भारत में हल्ला-गुल्ला मचा। जब शेख साहब पैरिस से दिल्ली लौटे तो उनको अपनी सफाई पेश करने के लिए श्री पटेल ने पार्लियामैण्टरी कांग्रेस पार्टी के सम्मुख उपस्थित होने पर बाध्य किया। शेख साहब ने बहुत चतुराई से यह कह दिया कि उनका अभिप्राय यह नहीं था। इसके पश्चात् भी यत्र-तत्र वे इस बात की चर्चा करते रहे कि कश्मीर स्वतन्त्र राज्य है और यदि भारत के साथ सम्मिलित होगा तो कुछ राजनीतिक विषयों में ही होगा।

भारत के संविधान में यह लिखा है कि कश्मीर भारत के साथ सुरक्षा, यातायात और विदेशीय सम्बन्धों में सम्मिलित होता है। आरम्भ में प्रायः सब भारतीय राज्य इतने अंशों में ही भारत में सम्मिलित हुए थे, परन्तु संविधान बनने से पूर्व ही श्री पटेल जी के प्रयत्न से वे सब रियासतें पूर्ण रूप से भारत में सम्मिलित हो गई थीं। इधर कश्मीर, जिसकी समस्या को श्री पंडित नेहरू जी ने अपने हाथों में सुलझाने के लिए लिया हुआ था, संविधान बनने तक केवल इन विषयों में ही सम्मिलित हो सका। इस संविधान पर कश्मीर के प्रतिनिधियों के हस्ताक्षार हुए हैं। इस पर भी इस विषय पर लोकमत-संग्रह का हठ बना रहा और शेख साहब ने अपना पैंतरा बदलना आरम्भ कर दिया। कश्मीर भारत के साथ सम्मिलित हो अथवा पाकिस्तान के साथ, इस विषय पर जनमत होना भारत के संविधान के विरुद्ध है। यह बात पंडित जी ने अपने निजी रूप में कही थी। देश इसके लिए उत्तरदायी नहीं।

१९५१ में कश्मीर की विधान सभा का निर्वाचन हुआ और ज्यों-त्यों कर शेख अब्दुल्ला की पार्टी के लोग पूर्ण रूप में निर्वाचन में सफल हुए। इस ज्यों-त्यों का अर्थ असंगत होने से यहाँ नहीं लिखा जाता। इस पर भी इस विधान सभा को बने दो वर्ष हो चुके थे, इस पर भी कश्मीर का भारत से किस प्रकार का सम्बन्ध हो, इस विषय में कुछ निश्चय नहीं हो सका था।

जम्मू में प्रजा परिषद् के लोग कश्मीर की विधान सभा में जाकर अपना दृष्टिकोण उपस्थित करना चाहते थे, परन्तु जब इस पार्टी के उम्मीदवारों के, असत्य तथा कृत्रिम कारणों से, आवेदन-पत्र रद्द कर दिये गए तो उन्होंने इस विधान सभा में न जा सकने पर अपनी माँगें घोषित कर दीं। उनकी माँगें कश्मीर विधान सभा के सम्मुख थीं। पंडित नेहरू जी तथा भारत सरकार को यह विषय कश्मीर के भीतर का विषय मान, इसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था। एक ओर तो पंडित नेहरू ने कश्मीर विधान सभा बनने दी और साथ ही तत्कालीन क़श्मीर सरकार से प्रजा परिषद् के उम्मीदवारों के आवेदन-पत्रों के रद्द हो जाने पर हस्तक्षेप करना उचित नहीं माना, तो प्रजा परिषद् पार्टी ने अपनी माँगें घोषित कर दीं। उनका कहना था कि कश्मीर की विधान सभा यह पारित कर दे कि कश्मीर भारत का पूर्ण रूप में अभिन्न अंग है। जैसे अन्य 'बी' श्रेणी के राज्य हैं वैसे कश्मीर भी हो। यह माँग न तो असंगत थी और न ही साम्प्रदायिक। यदि तो यह कहा जाता कि कश्मीर के किसी क्षेत्र में से मुसलमानों अथवा हिन्दुओं को निकाला जाए अथवा हिन्दुओं के किसी अधिकार की माँग की जाती, तब तो इस कहने में कुछ तथ्य भी था कि प्रजा परिषद् की माँग साम्प्रदायिक है; परन्तु ऐसा नहीं था और इस माँग को साम्प्रदायिक क्यों कहा गया, इसका उत्तर अभी तक संतोषजनक नहीं मिला।

जम्मू के लोग कश्मीर के अन्तर्गत थे। उनको सन्देह हुआ कि जम्मू-कश्मीर की विधान सभा कश्मीर का भारत से सम्बन्ध अधूरा और शिथिल रखना चाहती है। उन्होंने अपना संशय कश्मीर की जनता के सम्मुख रखा। इस पर शेख अब्दुल्ला की पार्टी ने प्रजा परिषद् को गालियाँ देनी आरम्भ कर दीं। जब प्रजा परिषद् का आन्दोलन जोर पकड़ने लगा तो शेख साहब ने, उनको आश्वासन देने के स्थान पर, उनसे झगड़ा आरम्भ कर दिया। प्रजा परिषद् को अवैध घोषित कर दिया। जम्मू में धारा ५० लगा दी। इसका अभिप्राय आन्दोलन का मुख बंद करना था।

यहाँ एक भ्रम-निवारण करना आवश्यक है। आन्दोलन का अर्थ कानून भंग करना नहीं होता। आन्दोलन का अर्थ तो जनता में विचार-प्रोत्साहन करना और अपने विचारों का प्रचार करना मात्र है। इतने मात्र को दबाने के लिए यदि सरकार कोई कठोर कार्य करती है तो उस कार्रवाई का विरोध कानून-भंग नहीं, प्रत्युत अपने नागरिक अधिकारों की रक्षा है। यही जम्मू में हुआ। प्रजा परिषद् के लोग अपनी विधान सभा से यह माँग कर रहे थे कि कश्मीर का भारत में पूर्ण रूप से विलय हो। यह आन्दोलन जम्मू में बल पकड़ने लगा तो सरकार का आसन डोलने लगा और सरकार के कारिन्दों ने प्रजा परिषद् का मुख बन्द करने के लिए धारा ५० का प्रयोग किया। प्रजा परिषद् के जलसे-जुलूस, व्याख्यान बन्द करने के लिए लाठियाँ चलीं और गोलीकाण्ड होने लगे। कोई भी स्वाभिमानी मनुष्य इस प्रकार के अत्याचार को सहन नहीं कर सकता। २५ नवम्बर १९५२ से पूर्व प्रजा परिषद् के आन्दोलन में कोई भी अशान्तिमय घटना नहीं हुई थी। इस पर भी इसको बन्द करने के लिए उक्त कठोर व्यवहार किया गया। इससे

प्रजा-परिषद् के उद्देश्यों से सहानुभूति रखने वाले भारतवासियों के मन में चिन्ता उत्पन्न हो गई।

यहाँ एक विचारणीय बात यह भी है कि भारत सरकार ने प्रजा परिषद् के आन्दोलन को दबाने के लिए भारत से पुलिस और सेना भेजी। उन लोगों का गला घोंटने के लिए, जो जम्मू और कश्मीर का भारत में विलय चाहते थे, भारत सरकार फौज और पुलिस भेजे, यह बात देशभक्तों को असह्य हो उठी। यह देख कि भारत सरकार, जो उस समय पूर्णरूपेण पंडित जवाहरलाल नेहरू की मुट्ठी में थी, उन पर लाठी और गोली चलवा रही है जो लोग जम्मू-कश्मीर को भारत का अंग बनाने के लिए आन्दोलन चला रहे थे, देश का हित-चिन्तन करने वालों की आँखों में रक्ताश्रु आ गए। ऐसी मूर्खता और नृशंसता का चित्र संसार में कहीं नहीं मिलेगा।

इस पर भारतीय जनसंघ ने कानपुर में, अपने एक प्रस्ताव में यह घोषित किया कि वह प्रजा परिषद् जम्मू की माँग का समर्थन करता है तथा जम्मू-कश्मीर सरकार से अनुरोध करता है कि प्रजा परिषद् के लोगों और भारत सरकार से इस विषय में एक गोलमेज़ कान्फरेन्स कर अपने विचार प्रकाशित करे। यदि ऐसा नहीं किया जायगा तो इस विषय पर पूर्ण देश में आन्दोलन खड़ा किया जाएगा।

इस विषय पर भारतीय जनसंघ के प्रधान श्री डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने पंडित जवाहरलाल नेहरू और शेख अब्दुल्ला से पत्र-व्यवहार किया और उनसे निवेदन किया कि गोलमेज़ कान्फरेन्स की जाय। एक लम्बी चिट्ठी-पत्री पर भी जब प्रजा परिषद् से बातचीत करने के लिए शेख अब्दुल्ला तैयार नहीं हुए और श्री पंडित नेहरू जी ने इस पत्र-व्यवहार में प्रजा परिषद् पर तथा भारतीय जनसंघ पर असंगत और असत्य दोषारोपण किए तथा कश्मीर में प्रजा परिषद् पर लगाए प्रतिबन्धों को हटाने के स्थान, उन पर गोलीकाण्ड होने लगे, तो इच्छा न रहते हुए भी भारतवर्ष में प्रजा परिषद् की माँग के समर्थन में जलसे-जुलूस और प्रदर्शन किए जाने लगे।

इससे नेहरू सरकार घबराने लगी। भारतीय जनसंघ का कहना यह था कि कश्मीर तथा जम्मू का भारतवर्ष से सम्बन्ध स्थापित हो चुका है, उस विषय में जनमत-संग्रह व्यर्थ और विधान के विरुद्ध है। रही उस सम्बन्ध की सीमा, वह कश्मीर की विधान सभा निश्चय करे और उस सीमा को अधिक कराने के लिए तथा इस विषय में शीघ्र निश्चय कराने में आन्दोलन करना प्रजा परिषद् का अधिकार है। इस अधिकार को दबाने का शेख अब्दुल्ला का प्रयास अन्याय है। इस कारण प्रजा परिषद् पर लगाए प्रतिबन्ध उठ जाने चाहिएँ।

जनसंघ के आन्दोलन का प्रभाव सबसे अधिक पंजाब में हुआ। कांग्रेस सरकार की दूषित नीति की निन्दा चारों ओर होने लगी। कांग्रेसी मिनिस्टरों को जनता में जाकर भाषण देना कठिन होने लगा। इस पर भी पंजाब अथवा दिल्ली में किसी भी स्थान पर कोई हिंसात्मक कार्य नहीं हुआ। प्रजातन्त्रात्मक पद्धति में राज्य को नियन्त्रण में रखने का

एक ही उपाय है कि यदि किसी विषय पर जनता का मत सरकार के अनुकूल न रहे तो जनता जलसे-जुलूसों तथा प्रदर्शनों से अपने मन की बात सरकार तक पहुँचाए। इसको बन्द करना तो भारत के संविधान की अवहेलना करना है। यह मनुष्य के नागरिक अधिकारों पर कुठाराघात करना है।

इस पर भी जब कांग्रेसी सरकार ने अपने पाँव तले से मिट्टी खिसकती देखी, तो धारा १४४ का आश्रय लेकर सारे पंजाब में जलसे-जुलूस व प्रदर्शन बन्द कर दिए। यह फरवरी १९५३ में हुआ। मार्च में जलसे इत्यादि दिल्ली में भी बन्द कर दिये गए।

इस पर भारतीय जनसंघ ने यह निश्चय किया कि धारा १४४ की अवहेलना की जाय। यद्यपि जम्मू की प्रजा परिषद् के आन्दोलन का समर्थन भारतीय जनसंघ करता था, इस पर भी धारा १४४ की अवज्ञा तो केवल-मात्र नागरिक अधिकारों की रक्षा के लिए आवश्यक हो गई। यदि तो जनता की ओर से अथवा भारतीय जनसंघ के अधिकारियों की ओर से कोई हिंसात्मक व्यवहार होता, तब तो धारा १४४ के लगाने की आवश्यकता होती और इस धारा की अवज्ञा करना अनुचित होता। दिल्ली में तो कश्मीर के विषय में सैकड़ों सभाएँ हुईं, परन्तु एक भी सभा में शान्ति-भंग नहीं हुई। कुछ सभाओं में तो जनसंख्या चालीस-पचास हज़ार तक पहुँच गई थी। इनसे नगर में किसी प्रकार की अशान्ति उत्पन्न नहीं हुई। एक बात हुई कि म्यूनिसिपल उपचुनावों में, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के उपचुनावों में तथा दिल्ली की विधान सभा के उपचुनावों में कांग्रेस की करारी हार होने लगी। इससे कांग्रेस घबरा उठी और धारा १४४ को लागू कर दिया। जिस प्रकार यह धारा चलाई गई, वह तो केवल विरोधी विचारधारा को कुचलने का प्रयत्न मात्र था। यदि इस प्रकार के अन्याय का विरोध न किया जाता तो घोर पाप हो जाता।

अतएव ६ मार्च १९५३ को धारा १४४ की अवज्ञा आरम्भ हुई और इस अवज्ञा में डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी, प्रधान भारतीय जनसंघ, श्री निर्मलचन्द्र चटर्जी, प्रधान हिन्दू महासभा, श्री नन्दलाल शास्त्री, मन्त्री रामराज्य परिषद् और वैद्य गुरुदत्त तथा आठ अन्य व्यक्तियों ने इसका श्रीगणेश किया। ये लोग पकड़ लिये गए और इंडियन पीनल कोड की धारा १८८ के अनुसार इन पर अभियोग स्थापित किया गया। परन्तु पकड़कर जेल में रखने में मजिस्ट्रेट की किसी अनियमित कार्रवाई के कारण उक्त चारों व्यक्तियों को सुप्रीमकोर्ट ने छोड़ दिया। यद्यपि कोर्ट ने डॉक्टर मुखर्जी को जेल में रखना अनुचित बताया, इस पर भी धारा १८८ का अभियोग चलता रहा।

इस समय एक घटना और घटी। इस घटना का इतिहास इस प्रकार है। भारतीय जनसंघ के कानपुर के अधिवेशन में यह निश्चय किया गया था कि जनसंघ का शिष्ट-मण्डल जम्मू में जाकर वहाँ की परिस्थिति का अध्ययन करे और प्रजा परिषद् को सम्मति दे कि वह अपनी धारा ५० की अवज्ञा का आन्दोलन जारी रखे अथवा नहीं। यह दिसम्बर १९५२ में निश्चय किया गया था। इस शिष्टमण्डल में वैद्य गुरुदत्त और छः अन्य मान्य सदस्य थे। इनके नाम थे श्री चिरंजीलाल मिश्र, रिटायर्ड जज जयपुर, श्री

हरिदत्त, श्री लालसिंह शक्तावत, डिप्टी स्पीकर राजस्थान असैम्बली, श्री प्रोफेसर महावीर, श्री प्रेमनाथ जोशी तथा ठाकुर उम्मेदसिंह। जनवरी १९५३ में सरकार से कश्मीर जाने की स्वीकृति माँगी गई, परन्तु स्वीकृति नहीं दी गई। कश्मीर जाने के लिए भारत के सुरक्षा विभाग ने परमिट बनाया हुआ था। परमिट-सिस्टम सुरक्षा विभाग की ओर से होने से यह बात स्पष्ट थी कि फौजी सुरक्षा का ध्यान रख यह परमिट-व्यवस्था की गई थी। इसका यह अर्थ नहीं कि देश के भीतर की संस्थाओं के आने-जाने पर प्रतिबन्ध के लिए यह व्यवस्था थी। वास्तव में यह प्रबन्ध देश के संविधान के विरुद्ध था। देश के प्रत्येक नागरिक को अधिकार है कि वह देश के किसी भी भाग में जा सके। इस अधिकार को छीनने की क्षमता सुरक्षा विभाग के पास नहीं।

प्रजा परिषद् के आन्दोलन को धारा ५० से कुचलने का प्रयत्न करते हुए जम्मू-कश्मीर सरकार को लगभग छः मास हो गए थे और भारतीय जनसंघ के भारत की जनता को सचेत करने के आन्दोलन को कुचलने के, भारत सरकार के प्रयत्न को चलते हुए दो मास हो गए थे। भारत सरकार को कश्मीर सरकार पर दबाव डालना चाहिए था कि प्रजा परिषद् के आन्दोलन को विधिवत् चलने में बाधा न डाले; जब तक प्रजा परिषद् के जलसे-जुलूस और प्रदर्शन शान्तिमय ढंग से चलते हैं, उन पर प्रतिबन्ध न लगाए। किसी नागरिक अथवा संस्था को, शान्तिमय ढंग से अपने विचारों का प्रचार करने का अधिकार होना चाहिए। इसकी अपेक्षा सरकार ने न केवल जम्मू-कश्मीर सरकार की नृशंसतापूर्ण दमन-नीति का समर्थन किया, न केवल इस दमन के लिए अपनी पुलिस और फौज का प्रयोग किया, प्रत्युत भारत में भी, भारत सरकार की नीति की आलोचना बन्द करने के लिए १४४ का विस्तृत रूप में प्रयोग किया। लाठी व अश्रुगैस का विस्तृत प्रयोग किया गया। भारतीय जनसंघ के प्रधान डॉ० मुखर्जी को साम्प्रदायिक कहकर अपशब्द कहे और उनसे बातचीत तक करने से इन्कार कर दिया। केवल इतना ही नहीं, प्रत्युत राजनीतिक विरोध को कुचलने के लिए विदेशी जासूसों पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए प्रचलित परमिट का प्रयोग एक अति घृणित कार्य था। पंडित जवाहरलाल नेहरू अपना दृष्टिकोण रखते थे और उनके सहयोगी भी उसे ठीक समझते थे, परन्तु अपने विचारों के विरुद्ध विचार रखने वालों का, जब तक वे शान्तिमय हैं, कैसे धारा १४४ के प्रयोग से मुख बन्द कर सकते थे? धारा १४४ लगाने से पूर्व कोई ऐसी घटना, जिसमें किसी प्रकार से शान्ति भंग हुई हो, का न होना इस बात का प्रमाण है कि श्री नेहरू इन सब घटनाओं के उत्तरदायी थे जो इसके पश्चात् घटीं।

पहली मई के लगभग डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने एक पत्र सचिव सुरक्षा विभाग को लिखा जिसमें उनसे पूछा गया कि यह परमिट-व्यवस्था किस कानून के अनुसार चालू की गई है और इसका प्रयोग क्यों राजनीतिक विरोधी पक्षवालों पर किया जा रहा है ? इस समय यह बता देना अनुचित नहीं होगा कि ऐसा कहा जाता है कि पठानकोट में और शायद अन्य जिला मैजिस्ट्रेटों के पास भी भारत सरकार ने कुछ नामों की एक

सूची दे रखी थी, जिनको कश्मीर जाने के लिए किसी भी अवस्था में परमिट नहीं देना। ऐसा कहा जाता है कि उस सूची में डॉ० श्यामाप्रसाद मुखर्जी और भारतीय जनसंघ के अन्य प्रमुख कार्यकर्ताओं के नाम थे।

यह कहना कि ये लोग किसी विदेशी सरकार के जासूस थे, एक घृणित असत्य है। यह परमिट की व्यवस्था यदि भारत सरकार के होम डिपार्टमैण्ट के अधीन होती तो इसके आधार में कोई राजनीतिक कारण माने जाते और उस व्यवस्था में भारत की संसद में इस पर विचार हो सकता। शायद राजनीतिक आधार पर यह परमिट-व्यवस्था चलती तो सुप्रीम कोर्ट इस पर सम्मति देने की क्षमता रखती, परन्तु एक अन्य कार्य के लिए व्यवस्था बनाकर इसको राजनीतिक विचारों के दमन के लिए प्रयोग करना एक अन्याय था।

इसका विरोध करना भारतीय जनसंघ के प्रधान डॉक्टर मुखर्जी ने अपना कर्तव्य माना।

इस समय एक और परिस्थिति उत्पन्न हो गई। जम्मू के प्रतिष्ठित जनों का एक शिष्ट-मण्डल दिल्ली आया और श्री पंडित जवाहर लाल इत्यादि सरकारी लोगों से मिला। इस शिष्ट-मण्डल ने कुछ बातें जम्मू के विषय में बताईं जिनसे प्रजा परिषद् के लोगों के कहने का समर्थन होता था। इसके अतिरिक्त जम्मू-कश्मीर सरकार ने वजीर कमेटी नियुक्त कर दी थी जो जम्मू के लोगों की आर्थिक कठिनाइयों का अवलोकन कर रही थी। साथ ही जो समाचार जम्मू-कश्मीर की सरकार भेज रही थी, उनसे भिन्न समाचार वहाँ की जनता से प्राप्त हो रहे थे। कांग्रेसी समाचार-पत्र यह घोषित कर रहे थे कि प्रजा परिषद् के आन्दोलन से जम्मू की प्रजा त्राहि-त्राहि कर रही है। इन सब परिस्थितियों में यह आवश्यक प्रतीत होने लगा था कि जम्मू की वास्तविक परिस्थिति का अध्ययन कर धारा ५० के विरुद्ध आन्दोलन को बन्द कराने का यत्न किया जाय। इस अर्थ जम्मू जाने की आवश्यकता प्रतीत होने लगी थी।

अतएव डॉक्टर मुखर्जी ने यह निश्चय किया कि वे जम्मू में जाकर परिस्थिति से परिचय प्राप्त कर प्रजा परिषद् के लोगों को उचित सम्मति दें। इसके लिए डॉ० मुखर्जी का जम्मू जाने का निश्चय एप्रिल मास के अन्त में हो चुका था, परन्तु उन पर धारा १८८ का मुकद्दमा चल रहा था और जब तक उससे कम-से-कम एक सप्ताह का अवकाश न मिले तब तक जम्मू जाना सम्भव नहीं था। इस कारण इस यात्रा में देरी होती गई। अन्त में कई कारणों से पाँच मई को, धारा १८८ के अधीन चल रहे मुकद्दमे से बारह दिन का अवकाश मिला और जम्मू जाने का कार्यक्रम बना लिया गया।

संक्षिप्त जीवनी

डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी का जन्म १९०१ में हुआ। इनके पिता श्री आशुतोष मुखर्जी बंगाल के विख्यात शिक्षा-विशेषज्ञ और कलकत्ता विश्वविद्यालय के उप-कुलपति रहे थे। पिता के ये द्वितीय पुत्र थे। बाल्यकाल से ही इनकी प्रतिभा की छाप घर और बाहर पड़ रही थी। प्रायः प्रत्येक परीक्षा में ये सर्वप्रथम रहते थे। इन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से वकालत पास की और पश्चात् विलायत से बैरिस्टर बनकर आए। २४ वर्ष की आयु में अर्थात् १९२४ से ही ये विश्वविद्यालय के प्रबन्ध में सक्रिय-भाग लेने लगे थे। ये पहले सीनेट के सदस्य बन गए। अपने पिता की भाँति श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने भी विश्वविद्यालय के कार्य को जीवन-कार्य बना लिया और जीवन-पर्यन्त भिन्न-भिन्न पदों पर रहकर विश्वविद्यालय की सेवा करते रहे। कभी स्नातकोत्तर शिक्षा-समिति के प्रधान के रूप में, कभी फैकल्टी ऑफ आर्ट के डीन के रूप में और फिर उप-कुलपति बनकर बंगाल में शिक्षा के प्रसार में लगे रहे। चार वर्ष के उप-कुलपति होने के काल में इन्होंने दिन-रात एक कर, देश की अनथक सेवा की थी। इस काल की इनकी अनेक क्रियात्मक योजनाएँ आज भी कलकत्ता के विश्वविद्यालय को सुशोभित कर रही हैं। बंग भाषा के आप अति प्रेमी थे। विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम बंग भाषा बना सकने का श्रेय आपको ही प्राप्त है। 'बंग परिभाषा शब्दकोश' का निर्माण करवाने वाले आप ही थे। भिन्न-भिन्न विषयों पर बँगला भाषा में पुस्तकें लिखवाने का इनका प्रयास सराहनीय रहा।

इनके अतिरिक्त विश्वविद्यालय के अनेक नियमों में सुधार आपके प्रयास से, आपके उप-कुलपतित्व के काल में हुए। अपने काल में सैनिक शिक्षा का विश्वविद्यालय में पाठ्यक्रम चलाना भी आपके प्रयत्न से हुआ था।

विश्व-कल्याण की भावना और सांस्कृतिक उत्थान के लिए लगन ने ही आपको महाबोधि-समाज का प्रधान बनने के लिए प्रेरित किया ।

वे सब शिक्षा-सम्बन्धी और सांस्कृतिक कार्य जो आपने सन् १९२४ से लेकर सन् १९३८ तक किये, यदि इनकी व्याख्या और इनके लाभों का वर्णन किया जाए तो एक बृहत् ग्रन्थ बन जायगा। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि इतनी कम आयु में और कम काल में जो क्रियात्मक कार्य आपने विश्वविद्यालय के इतिहास में किए, वे अद्वितीय हैं।

डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने कुछ काल तक कानूनी प्रैक्टिस पहले वकील के रूप में, पीछे बैरिस्टर बनकर की। परन्तु उनकी रुचि शिक्षा और सार्वजनिक कामों में अधिक थी। इस कारण ये वकालत कुछ अधिक काल तक नहीं कर सके। इनकी वाणी में शक्ति और वक्तृता में युक्ति इतनी थी कि यदि वकालत करते तो उस कार्य में भी चोटी तक पहुँच जाते, परन्तु देश के कल्याणार्थ इन्होंने यह प्रलोभन छोड़ दिया।

डॉक्टर मुखर्जी ने राजनीति में भाग १९३९ से लेना आरम्भ किया था। उस समय ये बंगाल लैजिस्लेटिव असैम्बली के सदस्य निर्वाचित हो गए। इसके पश्चात् वे १९३९ में हिन्दू-महासभा के क्षेत्र में श्री सावरकर जी की प्रेरणा से चले गए। बंगाल के मुसलमानों के साम्प्रदायिक कार्यों को देखकर कांग्रेस को उनके राष्ट्र-विरोधी कार्यों का विरोध करने में असफल पा, डॉक्टर साहब के लिए कोई अन्य चारा ही नहीं था। इसी कारण उन्होंने हिन्दू महासभा को अपनाया। यदि डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी और श्री निर्मलचन्द्र चटर्जी १९३९ से संयुक्त प्रयत्न न करते तो समूचा बंगाल पाकिस्तान बन जाता। कांग्रेस तो इसके लिए तैयार ही थी। यह तो बंगाल की, भारत के लिए रक्षा की भावना ने, जो डॉक्टर साहब ने बंगाल में जागृत की थी, आधा बंगाल बचा लिया, अन्यथा महात्मा गांधी ने १९४४ में जिन्ना के साथ वार्त्तालाप में और १९४६ में पूना में आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी ने पंजाब और बंगाल समूचा पाकिस्तान के लिए दे दिया था।

१९४१ में हिन्दू महासभा के प्रधान होते हुए भी डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी फज़लहक के मन्त्रि-मण्डल में सम्मिलित हो गए। इस समय कांग्रेस मुस्लिम लीग से मिलकर मन्त्रि-मण्डल बनाना चाहती थी। श्री फज़लहक 'प्रजा कृषक पार्टी' के नेता थे। डॉक्टर साहब ने 'मुस्लिम लीग' के स्थान पर प्रजा कृषक पार्टी से मिलना अधिक अच्छा समझा। इस कार्य में देश और हिन्दू-समाज का हित ही उनको प्रेरणा दे रहा था। इसके एक वर्ष पश्चात् अपना त्याग-पत्र देते हुए आपने बंगाल के गवर्नर को लिखा—

If it is a crime to see one's country free and shake off foreign domination, then every self respecting Indian is a criminal .....

The doctrine of benevolent trusteeship stands exploded and you can no more throw dust into our eyes. Indian representatives, therefore, demand that the policy of administration of their country in all spheres, political, economic and cultural must be determined by Indians themselves, unfettered by irritating acts of unsympathetic bureaucrats and bungling governors.

मन्त्री-पद से त्याग का कारण यह था कि १९४१ में बंगाल का गवर्नर अपने विशेषाधिकारों से कई ऐसे कार्य कर रहा था, जो डॉक्टर साहब के विचार में देश के अहित में थे और प्रजा के कष्ट का कारण बन रहे थे। उस समय देश में आतंक का राज्य रहा था।

१९४२ में बंगाल में साईक्लोन आया था और उससे जो सर्वनाश हुआ था उसमें सहायता के स्थान पदाधिकारी जनता को यह शिक्षा देना चाहते थे कि कांग्रेस से सहयोग के कारण उनकी सहायता नहीं होगी। दुःख में जब लोग उन पदाधिकारियों के पास जाते तो वे यह कह देते, 'जाओ गांधी के पास।' यह डॉक्टर जी के मन्त्री-पद से त्याग-पत्र देने में अन्तिम कारण बन गया। डॉक्टर जी ने अपने त्याग-पत्र में उसका उल्लेख किया था। उन्होंने लिखा :

One officer's report in writing to Government was that relief, whether organized by Government or any private agency, should be withheld for a month and thereby people taught a permanent lesson..... Bonafide private relief workers from Calcutta, though they produced their credentials, found themselves in jail under the Defence of India Rules.

डॉक्टर जी ने अपने मन्त्री-पद से त्याग पत्र देते ही साईक्लोन द्वारा पीड़ितों की सहायतार्थ कार्य करना आरम्भ कर दिया।

१९४३ में मनुष्य-निर्मित अकाल में डॉक्टर साहब की सेवा स्वर्ण-अक्षरों में लिखी जायेगी।

ढाका के हिन्दू-मुसलमानों के झगड़े में जो शौर्य डॉक्टर जी ने दिखलाया, वह भारत माता के वीर पुत्रों की माला में पिरोये जाने योग्य है। किस प्रकार समाचार पाते ही आप अकेले, जान हथेली पर रखकर ढाका के नवाब के घर जा पहुँचे, फिर वहाँ एकत्रित हुए मुस्लिम नेताओं को लेकर झगड़े वाले मुहल्लों में पहुँचे, झगड़ा शान्त कराने का जो कार्य आपने किया, वह बंगाल का बच्चा-बच्चा जानता है।

१९४६ के डायरैक्ट ऐक्शन के समय कलकत्ते में जो हत्याकाण्ड हुआ, उसमें जो कार्य आपने किया, वह केवल सराहनीय ही नहीं प्रत्युत किसी भी देश के किसी भी वीर पुरुष के लिए अनुकरणीय हो गया है। इसी प्रकार नोआखाली में आप पहले हिन्दू थे, जो उस स्थान पर जलती आग में कूद पड़े, और हिन्दुओं के जान-माल की रक्षा करने लगे।

उनकी सेवाओं और योग्यता के कारण उनके हिन्दू महासभा के प्रधान होते हुए भी कांग्रेस ने पहले उनको कान्स्टीचूएन्ट असैम्बली का मेम्बर और फिर भारत का एक मन्त्री बनाया। यहाँ भी डॉक्टर साहब ने अपने कार्य को अति सराहनीय ढंग से निभाया। १९५० में जब पूर्वी पाकिस्तान में हिन्दुओं की भारी संख्या में हत्यायें होने लगीं और लाखों की संख्या में पूर्वी पाकिस्तान से हिन्दू भाग-भागकर भारत में आने लगे, तो डॉक्टर साहब का कहना था कि जितने हिन्दू वहाँ से आते हैं उनको पुनः अपने घरों में अपनी सेना भेजकर बसाया जाए, अन्यथा उनके रहने के लिए उसी तुलना में पाकिस्तान से भूमि ले ली जाय। पंडित जवाहरलाल लियाकत अली से बातचीत करना चाहते थे। इस पर डॉक्टर साहब ने यह स्पष्ट कह दिया कि पाकिस्तान के मन्त्री से

बातचीत तब होनी चाहिए जब वह उजड़े हुए हिन्दुओं को बसाने में हमारी सहायता करे। पंडित नेहरू नहीं माने और लियाकतअली के साथ समझौता करने पर तैयार हो गए और डॉक्टर साहब ने त्याग-पत्र दे दिया।

इस त्याग-पत्र के पश्चात् आप संसद में विरोधी दल के नेता बन गए। आपने अपने कार्य को ऐसी कुशलता के साथ निभाया कि सब आपकी भाषण व तर्क-शक्ति का लोहा मान गए। धीरे-धीरे श्री पंडित नेहरू डॉक्टर जी को साम्प्रदायिक कहकर निन्दा करने का प्रयत्न करने लगे और डॉक्टर साहब कांग्रेस के इस घृणित कार्य को देख कांग्रेस से लड़ने में अग्रसर होते गए। कांग्रेस की पाकिस्तान के सम्बन्ध में और अन्य अनेक विषयों में दूषित नीति को देख उन्होंने एक नया राजनीतिक दल बनाने का प्रयास प्रारम्भ किया। भारतीय जनसंघ के नाम से एक दल बनाया गया, जिसने भारत-भर में चुनाव लड़े, परन्तु कई कारणों से इनमें इस दल को विशेष सफलता नहीं मिली। इस पर भी अपने कार्यक्रम पर पूर्ण विश्वास होने के कारण और अपनी आत्मा में सत्य और न्याय पर आरूढ़ होने की भावना के कारण, आप भारतीय जनसंघ के कार्य में संलग्न रहे। निर्वाचनों में उनका दल केवल तीन मास का बच्चा था और साथ ही कांग्रेस ने इनमें प्रत्येक प्रकार का अनियमितपन भी किया था। इस कारण सफलता भी बहुत कम मिली। परन्तु उत्साह न छोड़ एक वर्ष में ही आप भारतीय जनसंघ को एक ऐसे स्थान पर ले आए कि पार्लियामेंट में पंडित नेहरू इस दल से घबराने लगे। निर्वाचन कमिश्नर ने भारतीय जनसंघ को देश के चार राष्ट्रीय दलों में एक स्थान दिया। दुर्भाग्य से जम्मू व कश्मीर की समस्या दिन-प्रतिदिन विकट होती गई और डॉक्टर साहब के मन में यह बात समा गई कि इस समय देश को चेतावनी न दी, तो कश्मीर भी, पाकिस्तान की भाँति देश से बिछुड़ जाएगा, और पीछे जनता यह कहेगी कि किसी ने भी उसे समय पर सचेत नहीं किया था। ऐसी स्थिति में देश को सावधान करने के लिए, उन्होंने देशव्यापी आन्दोलन चलाने का निश्चय, भारतीय जनसंघ के कानपुर-अधिवेशन में करवाया और आन्दोलन आरम्भ हो गया।

भारत सरकार की मूर्खता के कारण यह आन्दोलन, जो सर्वथा शान्तिमय और वैधानिक था, धारा १४४ के अनुचित लागू किए जाने से सत्याग्रह का रूप बन गया। इस पर भी डॉक्टर साहब अपने साथियों सहित निर्भीकता से इसमें कूद पड़े और एक बार, कश्मीर के विषय को, देश की जनता के मस्तिष्क में प्रथम स्थान पर ले आए।

अपनी मृत्यु के कुछ दिन पूर्व वे यह मानते थे कि आन्दोलन, जिसको सरकार ने अपनी दमन-नीति के कारण सत्याग्रह का रूप दिलवा दिया था, अपने उद्देश्यों में सफल हो गया है। इसने देश का ध्यान कश्मीर की समस्या की ओर आकर्षित कर लिया है। झूठ और फरेब से जो कश्मीर को भारत में शत-प्रतिशत मिल गया बताते थे, उनकी पोल खुल गई है। संविधान में जो कश्मीर को तीन विषयों में सम्बन्धित माना है, उसके विरुद्ध पंडित नेहरू का जनमत-संग्रह का बार-बार आग्रह देश के संविधान से द्रोह सिद्ध

हो गया है। इतनी सफलता ही इस आन्दोलन का उद्देश्य था, सो हो गई है। अब शेष काम जनता का था कि उन कांग्रेस के सदस्यों को जिन्हें उन्होंने निर्वाचित किया है, विवश करें कि वे अपना व्यवहार बदलें।

इस कारण डॉक्टर साहब आन्दोलन को बन्द करने की बात पर विचार कर रहे थे। इस समय उनका अकस्मात्, विचित्र तथा रहस्यमय परिस्थिति में, २३ जून १९५३ को प्रातः ३ बजकर चालीस मिनट पर स्वर्गवास हो गया।

जम्मू की ओर

जनवरी १९५३ के प्रथम सप्ताह में वैद्य गुरुदत्त तथा भारतीय जनसंघ के अन्य पाँच प्रमुख व्यक्तियों ने, जिनके नाम पीछे दिए जा चुके हैं, जम्मू की स्थिति का अध्ययन करने के लिए भारत सरकार के सुरक्षा-विभाग से जम्मू जाने के लिए परमिट माँगे। सरकार ने परमिट देने से इनकार कर दिया। इस इनकार का सम्बन्ध भारतीय जनसंघ की विचारधारा से था। अन्य पार्टियों को परमिट मिलता रहा था। इसका अर्थ स्पष्ट था कि केवल भारतीय जनसंघ के साथ पृथक् व्यवहार करने के लिए परमिट-पद्धति का प्रयोग किया गया था। अकाली पार्टी के लोग गए, कांग्रेस के लोग गए, सोशलिस्ट पार्टी के लोग गए, यहाँ तक कि कम्युनिस्ट पार्टी को वहाँ अधिवेशन करने की भी स्वीकृति दे दी गई।

यह पृथक् व्यवहार केवल इसलिए किया गया कि भारतीय जनसंघ सरकार की कश्मीर-नीति का विरोध करता था।

इसके पश्चात् एप्रिल मास में श्री उमाशंकर त्रिवेदी और श्री विष्णुघनश्याम देशपांडे, भारतीय संसद के सदस्य, दोनों ने जम्मू जाने का प्रयास किया। उनको जालन्धर में ही नजरबन्द कर अम्बाला जेल में डाल दिया गया। यदि तो उन पर बिना परमिट जम्मू जाने का अभियोग चलाया जाता तो न्यायालय में इस बात का पता चल जाता कि परमिट-पद्धति न्यायसंगत है अथवा नहीं। परन्तु सरकार ने उनको बिना परमिट के जम्मू जाने के कारण नहीं पकड़ा, प्रत्युत उनके द्वारा जनता की शांति भंग होने के भय से उनको नजरबन्द कर लिया। यह आरोप सर्वथा असत्य था और सुप्रीम कोर्ट ने उन पर कोई अभियोग न पा, उनको छोड़ दिया।

इससे सरकार को समझ आ जानी चाहिए थी, शायद समझ आई भी, परन्तु वैर-भाव के कारण सरकार के अधिकारी परमिट-पद्धति को राजनीतिक अस्त्र के रूप में प्रयोग करते रहे। इस कारण जब डॉक्टर मुखर्जी ने जम्मू जाने का निश्चय किया तो उन्होंने परमिट माँगना अपना अपमान समझा।

डॉक्टर जी ने सुरक्षा विभाग के मन्त्री को पत्र लिखकर पूछा कि परमिट के पीछे क्या अधिकार है और फिर इसको एक राजनीतिक पार्टी के विरुद्ध क्यों प्रयोग में लाया जाता है? मन्त्री महोदय का कोई उत्तर नहीं आया। इस पर डॉक्टर साहब ने ८ मई १९५३ को प्रातः साढ़े छः बजे की गाड़ी से दिल्ली से रवाना हो पंजाब का दौरा आरम्भ

करने की और पश्चात् बिना परमिट जम्मू जाने की घोषणा छपवाकर सब पत्रों में प्रकाशित करवा दी।

इस वक्तव्य में मुख्य-मुख्य बातें इस प्रकार थीं—

१. जम्मू में आन्दोलन चले छः मास हो गए हैं जिसमें २५०० सत्याग्रही पकड़े जा चुके हैं और ३० के लगभग गोली से मृत्यु के शिकार हो चुके हैं।

२. भारत में प्रजा परिषद् के आन्दोलन की सहायता में आन्दोलन चले दो मास हो गए हैं जिनमें १७०० के लगभग लोग जेल जा चुके हैं।

३. जहाँ तक लोगों को समझाने का सम्बन्ध है हमारा कार्य पूर्ण हो चुका है।

४. अब समय आ गया है कि इस आन्दोलन को, जो शान्तिमय ढंग से चल रहा है, समाप्त किया जाय और जम्मू-समस्या का सम्मानयुक्त सुझाव ढूँढा जाए।

५. जम्मू की परिस्थिति जानकर आन्दोलन को बन्द करने के विचार से मैं जम्मू जाना चाहता हूँ।

६. मैं परमिट नहीं ले रहा।

इस विषय में डॉक्टर मुखर्जी के वक्तव्य के शब्द इस प्रकार हैं—

Mr. Nehru repeatedly declared that the accession of the state of Jammu and Kashmir to India has been hundred percent complete. Yet it is strange to find that one can not enter the state without a previous permit from the Government of India. This permit is even granted to communists, who are playing their usual role in Jammu and Kashmir, but entry is barred to those who think or act in terms of Indian unity and nation-hood. I do not think Government of India is entitled to prevent entry into any part of the Indian Union, which according to Mr. Nehru himself, includes Jammu and Kashmir. Of course, if any one violates the law after entering any state, he will have to face the consequences.

जम्मू जाकर डॉक्टर मुखर्जी क्या करना चाहते थे, इस विषय में उनके शब्द इस प्रकार हैं—

My object in going to Jammu is solely to acquaint myself with what exactly had happened there and the present state of affairs. I would also come in contact with available local leaders representing various interests, outside Praja Parishad. It will be my endeavour to ascertain what the intention of the people of Jammu is and to find out if at all there is any possibility of the movement being brought to a peaceful and honourable end.... I for my sake do not rule out the possibility of even meeting Sh. Abdulla and have a personal discussion with him.

इस घोषणा से यह सिद्ध होता है कि डॉक्टर साहब ने, जम्मू में जाकर वहाँ के आन्दोलन में भाग लेने की अनिच्छा प्रकट कर दी थी और परमिट न लेकर जम्मू जाने में भी युक्ति दे दी थी। भारत सरकार के लिए इस घोषणा के होने पर दो मार्ग खुले थे। एक तो यह कि डॉक्टर मुखर्जी को जम्मू जाने की स्वीकृति दे देती। डॉक्टर साहब के यह आश्वासन देने पर कि वे वहाँ पर जलसे-जुलूस इत्यादि में भाग न लेकर वहाँ की परिस्थिति का अध्ययन कर शान्ति का मार्ग ढूँढने जा रहे हैं, उनकी बात पर अविश्वास प्रकट करना चाँद पर थूकने के समान था। अतएव बिना परमिट उनको जम्मू जाने की स्वीकृति मिलनी चाहिए थी; और यदि सरकार समझती थी कि उनकी परमिट-पद्धति न्याय-संगत है और वह उस पद्धति से देश के गण्यमान्य व्यक्ति को भी रोकने की क्षमता रखती है, तो पं० जवाहरलाल नेहरू की सरकार उनको बिना परमिट के जाने के अपराध में पकड़ती। इस पर मुकद्दमा न्यायालय में जाता और पता चल जाता कि डॉ० मुखर्जी का कहना ठीक था अथवा सरकार का परमिट-सिस्टम। पर सरकार ने ऐसा नहीं किया।

आठ मई १९५३ को दिल्ली स्टेशन पर लगभग तीन-चार हज़ार लोगों की भीड़ ने डॉ० साहब को पंजाब के दौरे और वहाँ से जम्मू के लिए विदा किया। जनता को, भारत सरकार के अनियमित और बदले की भावना से भरे व्यवहार को जानते हुए यह आशा थी कि सरकार डॉ० साहब को पकड़ लेगी, परन्तु जब डॉक्टर साहब से पूछा गया कि वे क्या आशा करते हैं, तो उनका उत्तर था, "मैं जम्मू जा रहा हूँ, शान्ति की भावना लेकर, और मुझको वहाँ जाने देना चाहिए।"

पूछने वाले ने फिर पूछा, "डॉक्टर जी ! सरकार आपको वैसे ही पकड़ लेगी जैसे श्री त्रिवेदी और श्री देशपांडे को पकड़ लिया था।"

"परन्तु वे तो छूट गए हैं और मुझको किस कानून से पकड़ेंगे ?"

"प्रिवेंटिव डिटेन्शन ऐक्ट के अधीन।"

"मैं भी छूट जाऊँगा। मेरा जम्मू जाना इस कानून के अधीन नहीं आ सकता।"

इस प्रकार यह यात्रा आरम्भ हुई। गाड़ी पैसेंजर थी और प्रत्येक स्टेशन पर ठहरती हुई जा रही थी। यह सूचना समाचारपत्रों और भारतीय जनसंघ के अपने बुलेटिनों द्वारा मार्ग के सब स्थानों पर पहुँच चुकी थी कि डॉ० मुखर्जी पंजाब और जम्मू के दौरे पर जा रहे हैं। परिणामस्वरूप प्रत्येक स्टेशन पर अपार जन-समूह उनके दर्शन करने और उनकी इस यात्रा में सफलता की भावना प्रकट करने के लिए एकत्रित था। शाहदरा में भीड़ की संख्या दो सहस्र, गाजियाबाद में पाँच सहस्र, मोदीनगर में पाँच सहस्र, मुरादनगर में एक सहस्र थी । प्रायः सब स्टेशनों पर सहस्रों की संख्या में लोगों ने डॉ० साहब का उत्साहपूर्वक स्वागत किया। इन स्थानों में मुख्य-मुख्य ये हैं— शाहदरा, गाजियाबाद, मुरादनगर, मोदीनगर, मेरठ, दौराला, खतौली, मुजफ्फरनगर, देवबन्द, सहारनपुर, जगाधरी, बरारा, अम्बाला छावनी। अम्बाला में दस सहस्र के लगभग

जनता एकत्रित थी। जनता में अपार उत्साह और शुभकामना की भावना उपस्थित मिली। ट्रेन के प्लेटफॉर्म पर पहुँचते ही गगन-भेदी नारों से रेल का स्टेशन गूँजने लगा था। 'मुखर्जी की जय हो', 'भारतीय जनसंघ अमर रहे', 'नेहरूशाही नहीं चलेगी', 'कश्मीर भारत का अंग है' इत्यादि नारे लगाए जाते थे।

अम्बाला में डॉ० साहब को विश्राम करना था। इस कारण उनको स्टेशन से नगर में, आर्यसमाज मन्दिर में ले-जाकर ठहराया गया। नगर में धारा १४४ लगी थी, इस कारण सार्वजनिक सभा के लिए कोई अवसर नहीं था। डॉक्टर जी कि इच्छा थी कि परमिट-सिस्टम की पोल खोली जाय। इस कारण शुद्ध इसी विषय पर सरकार से विवाद करने के लिए डॉक्टर जी ने धारा १४४ का विरोध नहीं किया। जहाँ-जहाँ सार्वजनिक सभा वर्जित थी, वहाँ सभा नहीं की गई। अम्बाला में, जैसा कि ऊपर वर्णन किया गया है, धारा १४४ लागू थी, इस कारण केवल कार्यकर्ताओं की एक सभा में डॉक्टर जी ने अपने जम्मू जाने के उद्देश्य का वर्णन किया। इस सभा में उन्होंने कहा, "जम्मू सरकार यह कहती है कि प्रजा परिषद् का आन्दोलन मर चुका है, प्रजा परिषद् के सदस्यों ने सरकारी भवनों को हानि पहुँचाई है, यह आन्दोलन हिंसात्मक है और जनता के शिष्टगण इस आन्दोलन के विरुद्ध हैं। हमको इन सब बातों के विपरीत समाचार मिल रहे हैं। इस कारण सत्य की खोज में जाना आवश्यक हो गया है। मैंने यह घोषणा सब समाचारपत्रों में दे दी है कि मैं वहाँ के आन्दोलन को प्रोत्साहित करने नहीं जा रहा।"

तत्पश्चात् समाचारपत्र-प्रतिनिधियों से वार्त्तालाप करते हुए डॉक्टर मुखर्जी ने कहा, "परमिट तो विदेशियों और विशेष रूप से पाकिस्तानी एजेण्टों के फौजी भेद को जानने से रोकने के लिए है, न कि देश के प्रतिष्ठित नागरिकों को देश के भ्रमण से रोकने के लिए। मैं देश की संसद का सदस्य होने के नाते प्रत्येक स्थान पर जाकर वहाँ की परिस्थिति का अध्ययन करने का अधिकार रखता हूँ। इस कारण मैं जम्मू जा रहा हूँ और बिना परमिट के जा रहा हूँ।"

अम्बाला से डॉक्टर मुखर्जी ने एक तार निम्न विषय का श्री शेख अब्दुल्ला, प्रधान मन्त्री जम्मू तथा कश्मीर राज्य को भेजा। इसमें उन्होंने लिखा—

"मैं जम्मू जा रहा हूँ। बिना परमिट के। मेरा वहाँ जाने का प्रयोजन वहाँ की परिस्थिति को जानकर आन्दोलन शान्त करने के उपायों को प्रतीत करना है। मैं आपसे भी मिलना चाहूँगा यदि सम्भव हुआ तो।"

इस तार की एक प्रतिलिपि श्री नेहरू जी के पास भी भेजी गई। एक पत्र-प्रतिनिधि ने पूछा, "डॉक्टर साहब! क्या आप समझते हैं कि शेख अब्दुल्ला आपसे मिलेंगे?"

"वह क्यों नहीं मिलेंगे? मैं उनसे मिलने की इच्छा रखता हूँ। कोई कारण नहीं कि वह ना कर दें।"

अम्बाला से डॉक्टर मुखर्जी मोटर द्वारा शाहबाद के लिए चल पड़े। शाहबाद में

धारा १४४ लागू नहीं थी, इस कारण वहाँ पर एक सार्वजनिक सभा का प्रबन्ध था। शाहबाद एक छोटा-सा कस्बा है। यहाँ कुछ दिन पीछे म्युनिसिपल चुनाव होने वाले थे। दो-तीन हज़ार की उपस्थिति में डॉक्टर साहब का भाषण हुआ। इस भाषण में आपने जनता को बताया कि भारतीय जनसंघ म्युनिसिपल चुनाव नहीं लड़ रहा। इसका कारण यह है कि इस समय हमारी संस्था जम्मू-कश्मीर के आन्दोलन में लगी हुई है और निर्वाचन लड़ने के लिए हमें अवकाश नहीं। इस पर भी कुछ स्थानों पर हम संकेत-मात्र ही लड़ रहे हैं। हमारा विचार है कि जनता जो हमारे दृष्टिकोण का समर्थन करती है, उन स्थानों पर खड़े सदस्यों को वोट देकर प्रकट करे कि वह हमारे साथ है।

शाहबाद से मोटर द्वारा करनाल के लिए रवाना हुए। मार्ग में नीलोखेड़ी कालोनी के लोगों ने गाड़ी रोक ली। चार-पाँच हज़ार के लगभग लोग वहाँ एकत्रित थे और डॉक्टर साहब को वहाँ आधा घण्टा-भर भाषण देना पड़ा। यहाँ धारा १४४ नहीं लगी थी। नीलोखेड़ी से चलकर रात के ८ बजे डॉक्टर साहब करनाल पहुँचे। वहाँ चायपान करने के पश्चात् एक सार्वजानिक सभा में दस सहस्र के लगभग उपस्थिति में भाषण दिया। इस भाषण में डॉक्टर साहब ने अपने जम्मू जाने का उद्देश्य वर्णन किया। उन्होंने कहा, "श्री पंडित जवाहलाल नेहरू ने पार्लियामेंट में कहा है कि जम्मू-कश्मीर का भारत में विलयन शत-प्रतिशत हो चुका है। मैं पंडित जी के इस कथन की परीक्षा करने के लिए जा रहा हूँ। मेरा विचार है कि भारत के प्रत्येक भाग में भारत के एक नागरिक को आने-जाने का अधिकार है। मैंने यह घोषित किया है कि मैं वहाँ आन्दोलन को प्रोत्साहन देने नहीं जा रहा। अब देखना है कि पंडित नेहरू और शेख अब्दुल्ला इस विषय में क्या करते हैं।"

करनाल की जनता में भारी उत्साह था और सब यह समझते थे कि श्री नेहरू जनता के सम्मुख वास्तविक परिस्थिति का वर्णन नहीं कर रहे और डॉक्टर मुखर्जी के जम्मू जाने से उनकी शेख अब्दुल्ला के कामों पर पर्दापोशी समाप्त हो जाएगी।

करनाल में रात-भर ठहरने के पश्चात् ९ मई को प्रातःकाल वे मोटर से पानीपत के लिए चल पड़े। पानीपत में एक विराट् जनसमूह के सम्मुख डॉक्टर साहब का भाषण हुआ। उन्होंने यहाँ भी अपना जम्मू जाने का उद्देश्य बताया। उन्होंने कहा, "भारतीय जनसंघ, प्रजा परिषद् के आन्दोलन का समर्थन कर रहा है। वहाँ की सरकार की ओर से यह समाचार प्रसारित किया जा रहा है कि प्रजा परिषद् का आन्दोलन अहिंसात्मक नहीं रहा। यद्यपि विज्ञप्तियों में कोई विशेष हिंसा का उदाहरण नहीं दिया गया, इस पर भी हम अपना कर्त्तव्य समझते हैं कि वास्तविक परिस्थितियों का ज्ञान रखें। भारत सरकार ने हमारे लोगों के वहाँ जाने पर गैर-कानूनी पाबन्दी लगा दी है। इसको तोड़ना आवश्यक है। इन उद्देश्यों से मैं जम्मू जाना चाहता हूँ और इस दृष्टिकोण से एक तार मैंने शेख अब्दुल्ला को भेजा है।"

यद्यपि डॉक्टर साहब समझते थे कि उनके जम्मू व कश्मीर जाने पर प्रतिबन्ध

लगाने में कोई युक्ति नहीं; परन्तु वह भारत सरकार और कश्मीर सरकार के कर्णधारों का व्यवहार देखकर संशित थे। जब इस विषय पर कोई पूछता तो कह देते कि, "भारतवर्ष में विचित्र घटनाएँ घट रही हैं। जो लोग देश की वृद्धि और उन्नति चाहते हैं वे फिरकादार बताए जाते हैं। जो मुसलमानों के लिए देश का विभाजन करने को तैयार हो गए थे अथवा मुसलमानों को सन्तुष्ट करने के लिए कश्मीर देने को तैयार हैं, वे नेशनलिस्ट हो गए हैं। इससे जो बात युक्ति से ठीक मालूम होती हो उसको करने के लिए ये अयुक्तिसंगत विचार रखने वाले आदमी तैयार होंगे, कहना कठिन है।"

पानीपत से पुनः रेल-यात्रा आरम्भ हुई और जिस-जिस स्टेशन पर गाड़ी ठहरी, सहस्रों लोग स्वागतार्थ एकत्रित मिले। पुष्पमालाएँ, खाने के लिए फल व दूध लेकर, लोग स्टेशनों पर आते थे और अपनी श्रद्धाभक्ति का परिचय देते थे। बार-बार डिब्बा फूलों से भर जाता था और उसको साफ करना पड़ता था। सायं चार बजे के लगभग गाड़ी फगवाड़ा पहुँची। स्टेशन पर लगभग नौ-दस हजार का जन-समूह एकत्रित था। वहाँ से एक लम्बा जुलूस निकाला गया, जो मण्डी में जाकर समाप्त हुआ। पश्चात् एक सार्वजनिक सभा में डॉक्टर साहब का भाषण हुआ। सभा में जनता लगभग बीस हजार के थी। एक घण्टा और तीस मिनट तक डॉक्टर साहब ने भाषण दिया। जो विशेष बात डॉक्टर साहब ने यहाँ पर कही वह इस प्रकार थी, "पंडित नेहरू एक-तिहाई कश्मीर पाकिस्तान को दे चुके हैं। मैं पंडित जी से पूछता हूँ कि इस भाग को लेने के लिए क्या प्रयत्न किया गया है और यदि कुछ यत्न नहीं किया गया तो क्यों? ऐसा सुनने में आता है कि भारत के इस भाग को सरकार पाकिस्तान को भेंट करना चाहती है। मैं पूछता हूँ कि यह क्यों? क्या यह इसलिए नहीं कि वहाँ मुसलमानों की संख्या अधिक है? यदि केवल मात्र यह कारण है तो मुसलमानों के लिए देश के टुकड़े करने वाले किस प्रकार दूसरों को साम्प्रदायिक कहने का साहस कर सकते हैं? मैं भारत की एक इंच भूमि भी विदेशियों के हाथ में जाने देना नहीं चाहता।"

फगवाड़ा में शेख अब्दुल्ला को भेजे तार का उत्तर मिला। इसमें लिखा था, "मैं आपके जम्मू जाने से कुछ उपयोगी कार्य-सिद्धि की आशा नहीं करता।"

इस तार को पढ़कर डॉक्टर साहब के मन में जो भाव उठे, वे उन्होंने फगवाड़ा के एक प्रश्नकर्त्ता के उत्तर में प्रकट किए। डॉक्टर साहब ने कहा, "मैं जम्मू में जाकर परिस्थिति का अध्ययन करना चाहता हूँ। इस कारण इसकी उपयोगिता को मैं समझता हूँ। यदि शेख साहब इसमें कोई लाभ नहीं समझते तो वे मुझसे न मिलें और अपना समय किसी अन्य उपयोगी कार्य में व्यतीत करें।"

पंडित नेहरू जी ने इस तार के उत्तर में कोई सन्देश भेजना उचित नहीं समझा। दिल्ली के समाचारपत्रों ने इस तार को वैसा ही पाया जैसा महाराजा हरिसिंह ने पंडित नेहरू को सन् १९४६ में भेजा था, जब वे शेख अब्दुल्ला की हिमायत में कश्मीर जाने वाले थे।

फगवाड़ा में डॉक्टर साहब रात-भर रहे। अगले दिन १० मई को उन्होंने वहाँ के

एक कॉलेज में विद्यार्थियों के सम्मुख भाषण दिया। इस भाषण में उन्होंने कश्मीर के विषय में विचार प्रकट किए।

फगवाड़ा से मोटर द्वारा जालन्धर के लिए रवाना हुए। दोपहर लगभग ग्यारह बजे वहाँ पहुँचे। वहाँ दोपहर पश्चात् उन्होंने एक प्रेस कान्फरेन्स में अपने जम्मू जाने के विषय में वक्तव्य दिया। इसके पश्चात् पंजाब तथा कश्मीर की राजनीति पर अनेक पत्रों के प्रतिनिधियों ने प्रश्न पूछे। डॉक्टर साहब ने बताया, "जम्मू-कश्मीर का विषय यू० एन० ओ० में इसलिए नहीं गया था कि वहाँ पर जनमत-संग्रह कैसे और कब किया जाए, प्रत्युत इसलिए कि पाकिस्तान ने भारत के एक प्रदेश पर आक्रमण किया है और उसे अपनी सेनाएँ वापस ले जानी चाहिएँ। जब विचारणीय प्रश्न केवल पाकिस्तानी सेनाएँ कश्मीर से निकालना था, तो विषय बदलते समय पंडित जी को विरोध करना चाहिए था। और यदि यू० एन० ओ० नहीं मानता था तो भारत को उस संस्था को छोड़ देना चाहिए था। पंडित जवाहरलाल जी को कश्मीर के विषय में जनमत-संग्रह करने की घोषणा नहीं करनी चाहिए थी, और यदि की थी तो इसको केवल कश्मीर और भारत का विषय रहने देना चाहिए था। इसको एक अन्तर्राष्ट्रीय विषय बनाना सर्वथा अदूरदर्शिता का चिह्न है।"

पंजाबी प्रान्त के विषय में डॉक्टर मुखर्जी ने कहा, "भारतीय जनसंघ भाषा को प्रान्तों के बँटवारे में एक कारण मानता है, परन्तु यह ही केवल एक कारण नहीं हो सकता। राज्य-प्रबन्ध, आय-व्यय का सन्तुलन और भौगोलिक तथा सुरक्षा-सम्बन्धी समस्याएँ भी प्रान्तों के बनने में भाग लेंगी।"

एक पत्रकार ने पूछा, "उक्त सिद्धान्तों से आप पंजाबी सूबे की माँग को कैसा समझते हैं?"

"जब तक पंजाबी प्रान्त की सीमा का पता न चले, तब तक इस विषय में कुछ कहना कठिन है। पश्चिमी पंजाब के लोग भारी संख्या में अम्बाला डिवीजन में जा बसे हैं। इस कारण पंजाबी बोलने वाले क्षेत्र अब केवलमात्र वे ही नहीं रहे जो सन् १९४७ से पूर्व थे। हमारा यह कहना है कि भारत सरकार तुरन्त एक कमीशन इस विषय पर विचार करने के लिए नियुक्त करे, जो प्रान्तों की सीमाएँ निर्धारित करे।"

जालन्धर से उसी दिन वे मध्याह्न पश्चात् पाँच बजे रेलगाड़ी से अमृतसर के लिए चल पड़े। स्टेशन पर एक हजार से अधिक लोग विदा करने के लिए आए हुए थे। जिस डिब्बे में डॉक्टर साहब और उनके साथी सवार हुए, उसमें एक सज्जन पहले से ही बैठे हुए थे। ये पगड़ी, सफेद कोट और पायजामा पहने हुए थे। ये गुरदासपुर के डिप्टी कमिश्नर थे। जब गाड़ी चल पड़ी तो ये सज्जन उठकर डॉक्टर साहब के पास आ बैठे और अपना परिचय देकर कहने लगे, "यद्यपि मैं आपको पहले बताने को बाध्य नहीं हूँ, इस पर भी यह कह देने में हानि नहीं समझता कि पंजाब सरकार ने यह निर्णय कर लिया है कि आपको पठानकोट तक न जाने दिया जाए। मैं अभी यह नहीं बता सकता कि

आपको कब और कहाँ पर बन्दी बना लिया जाएगा। इस विषय में मैं अपनी सरकार की आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।"

इस वार्त्तालाप के फलस्वरूप डॉक्टर साहब ने निश्चय कर लिया कि अपने साथ वे केवल उन्हीं लोगों को रखेंगे जो बन्दी होने के लिए तैयार थे। डॉक्टर साहब अमृतसर पहुँचे तो लगभग बीस हजार की भीड़ उनके स्वागतार्थ प्लेटफार्म पर और स्टेशन के बाहर उपस्थित थी। गगनभेदी नारों और पुष्प-वर्षा के मध्य डॉक्टर साहब को स्टेशन के बाहर लाया गया और उन्हें एक मोटर में बैठाकर ठहरने के स्थान पर ले जाया गया।

सायंकाल कार्यकर्ताओं की एक बैठक आर्यसमाज मन्दिर में हुई और वहाँ पर डॉक्टर साहब ने जम्मू प्रजा परिषद् के आन्दोलन की मीमांसा पर अपने विचार प्रकट किए। इस विषय में उन्होंने विशेष बल इस बात पर दिया कि यदि नेहरू जी अपने जनमत-संग्रह का वचन भंग नहीं करना चाहते तो अब जम्मू-कश्मीर की विधानसभा को, जो सर्व मतदान से बनी है, कश्मीर और भारत का प्रश्न सुलझाने के लिए दें। यही प्रजा-परिषद् चाहती है। यद्यपि प्रजा परिषद् यह भी चाहती है कि यह विधान सभा जम्मू-कश्मीर का पूर्ण विलयन भारत में कर दे, तो भी वे विधान सभा को ऐसा करने के लिए कहते हैं। यह कहना न केवल युक्ति-संगत है प्रत्युत उनका अधिकार भी है। रहा सत्याग्रह, वह तो जम्मू-कश्मीर सरकार ने धारा ५० लगाकर स्वयं चलवाया है। प्रजातन्त्रात्मक पद्धति में जलसे, जुलूस व प्रदर्शन प्रचार के साधन हैं और इन पर प्रतिबन्ध लगाना प्रजातन्त्रात्मक पद्धति का गला घोंटना है।

११ मई को डॉक्टर साहब अपने साथियों-सहित पठानकोट के लिए रेलगाड़ी में रवाना हुए। पूर्ववत् प्रत्येक स्टेशन पर डॉक्टर साहब का अभिवादन करने के लिए सहस्रों की संख्या में लोग उपस्थित मिले। बटाला स्टेशन पर वहाँ के रेज़ीडेंट मजिस्ट्रेट गाड़ी में आकर डॉक्टर साहब के सामने की सीट पर बैठ गए। उन्होंने स्वयं अपना परिचय दिया। परन्तु बताया कि वे केवल उनको अपने क्षेत्र में से गुज़रने तक साथ रहने के लिए आए हैं। गुरदासपुर में वे साहब चले गए और एक अन्य सज्जन, जो उस इलाके के रेज़ीडेंट मजिस्ट्रेट थे, वहाँ पर आए। उन्होंने भी अपना परिचय देकर वही बात बताई। वे डॉक्टर साहब के साथ पठानकोट तक गए।

पठानकोट में भी लगभग दस सहस्र जनता स्वागत के लिए खड़ी थी। प्लेटफार्म पर डिप्टी कमिश्नर गुरदासपुर और बहुत-से पुलिस अफसर विद्यमान थे। डॉक्टर साहब का स्टेशन पर भव्य स्वागत किया गया और पुष्पवर्षा के भीतर उनको उनके ठहरने के स्थान तक ले-जाया गया।

भोजन करते समय ज़िला मजिस्ट्रेट का एक सन्देश एक चपरासी लेकर आया। वे डॉक्टर साहब से मिलना चाहते थे। डॉक्टर साहब ने भोजनोपरान्त दो बजे मिलने का समय दिया। ठीक समय पर डिप्टी कमिश्नर पधारे और पाँच मिनट तक डॉक्टर जी से

बातचीत करके चले गए। उनके जाने के पश्चात् पता चला कि वे कह गए हैं, "मुझको मेरी सरकार की सूचना मिली है कि मैं आपको बिना परमिट जाने दूँ। मुझको यह भी आज्ञा मिली है कि आपके साथियों को भी जाने दूँ। यद्यपि साथियों की संख्या निश्चित नहीं और आप जितने लोग चाहें अपने साथ ले-जा सकते हैं, परन्तु मेरी सम्मति है कि आप थोड़े-से लोग ही लेकर जाएँ।"

डिप्टी कमिश्नर की इस सूचना के पश्चात् डॉक्टर साहब तथा उनके साथियों के लिए अपने उन वचनों को, जो उन्होंने ८ तारीख के वक्तव्य में तथा उसी तारीख को अम्बाला से दिए तार में दिए थे, पालन करने की बात आ गई। जम्मू जाने के लिए सवारी का प्रबन्ध होने लगा। सरकारी कर्मचारी भी इस विषय में सहयोग देने के लिए तैयार हो गए।

गुरदासपुर के डिप्टी कमिश्नर की जालन्धर में रेलगाड़ी में दी गई सूचना के कारण हम यह धारणा बना बैठे थे कि या तो डॉक्टर साहब अमृतसर में या पठानकोट पहुँचने से पूर्व किसी स्टेशन पर पकड़ लिये जाएँगे। जब हम पठानकोट पहुँच गए और वहाँ भी नहीं पकड़े गए, तब यह विचार आया कि हमें माधोपुर पोस्ट पर पकड़ा जाएगा। इस कारण हमने माधोपुर पोस्ट तक ही, जो पठानकोट से सात-आठ मील के अन्तर पर थी, सवारी का प्रबन्ध किया था। अब इस नवीन सूचना के पश्चात् जम्मू तक जाने के लिए गाड़ी का प्रबन्ध होने लगा। एक जीप मिल गई, परन्तु ड्राइवर के पास जम्मू जाने के लिए परमिट नहीं था। इस विषय में डिप्टी कमिश्नर से इसके लेने का विचार किया गया। वे उस समय माधोपुर पोस्ट पर चले गए थे। चार बजे डॉक्टर साहब और उनके साथ भारतीय जनसंघ के कार्यकर्ता पठानकोट से जम्मू के लिए रवाना हुए, और साढ़े चार बजे के लगभग माधोपुर पोस्ट पर जो रावी पर पुल के इस पार है, जा पहुँचे।

माधोपुर पोस्ट पर गुरदासपुर के डिप्टी कमिश्नर, बटाला और गुरदासपुर के रेज़ीडेंट मजिस्ट्रेट, पठानकोट के रेज़ीडेंट मजिस्ट्रेट और पुलिस कान्स्टेबल तथा अन्य अफसर भारी संस्था में उपस्थित थे। हमने अपनी जीप-गाड़ी वहाँ खड़ी कर ली और डिप्टी कमिश्नर से जीप के लिए परमिट माँगा। उन्होंने वचन दिया कि हम लखनपुर पोस्ट तक, जो पुल के उस पार है, चलें और वे परमिट भेज देंगे। हमारे जाने पर उन्होंने हमारी यात्रा की सफलता के लिए शुभ कामना प्रकट की।

जीप में हम आठ व्यक्ति थे। डॉक्टर मुखर्जी तथा सात और। जब हम पुल के मध्य में पहुँचे तो हमें सामने मार्ग रोके बहुत-से पुलिस कांस्टेबल हाथ में लाठियाँ लिये खड़े दिखाई दिए। उनमें से एक ने हाथ खड़ा कर हमको रोका और हमारे रुकने पर कहा, "मुझको एक बहुत बुरा कर्तव्य पालन करना पड़ रहा है। आपके लिए यह एक आज्ञा है।"

डॉक्टर जी ने आज्ञा लेकर पढ़ी। उसमें लिखा था कि चूँकि डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी, जम्मू राज्य में प्रवेश कर ऐसी कार्रवाई करने वाले हैं जिससे अशान्ति फैलने का

भय है, इस कारण डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी को कहा जाता है कि वे जम्मू व कश्मीर राज्य में प्रवेश न करें।

डॉक्टर जी ने आज्ञा पढ़कर कहा, "मुझको भारत सरकार ने यहाँ आने की स्वीकृति दे दी है। अब यह क्या है?"

पुलिस अफसर ने कहा, "मैं सुपरिण्टैंडैंट पुलिस कठुआ हूँ और मुझको आज्ञा मिली है कि मैं यह आपको दे दूँ।"

"पर मैं तो जम्मू जाने का विचार रखता हूँ।"

इस पर सुपरिण्टैंडैंट साहब ने अपनी जेब में से एक अन्य आज्ञापत्र निकालकर दे दिया। इसमें लिखा था, 'चूँकि डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने ऐसा काम किया है, कर रहा है और करने वाला है, जिससे जम्मू में शान्ति भंग होने की सम्भावना है, इस कारण मैं, इंस्पेक्टर जनरल ऑफ पुलिस जम्मू तथा कश्मीर, डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी को पब्लिक सेफ्टी ऐक्ट की धारा तीन-ए के अधीन बन्दी बनाता हूँ'''' इत्यादि।'

डॉक्टर साहब ने उत्तर दिया, 'ऑल राइट'।

इस पर डॉक्टर साहब को जीप में से उतार लिया गया और उनके साथ वैद्य गुरुदत्त व श्री टेकचन्द शर्मा भी जीप से उतर पड़े। सुपरिण्टैंडैंट के पूछने पर, जब उन्होंने भी अपनी जम्मू जाने की इच्छा प्रकट की तो वे भी बन्दी बना लिये गए। शेष साथी लौटा दिए गए।

लखनपुर पोस्ट पर डॉक्टर साहब, श्री टेकचन्द शर्मा और वैद्य गुरुदत्त को पौना घण्टा के लगभग रोका गया और डॉक्टर साहब के दोनों साथियों को एक कागज पर टाइप किए वारंट पढ़कर सुना दिए गए। पश्चात् छः बजे के लगभग तीनों को एक पुलिस-जीप में बैठाकर एक फौजी कैप्टन के अधीन श्रीनगर के लिए रवाना कर दिया गया। एक पुलिस-जीप आगे थी और एक पुलिस-जीप पीछे। फौजी कैप्टन अपने चार जवानों के साथ उस जीप में थे जिसमें बन्दी बैठे थे।

रात के दस बजे गाड़ियाँ ऊधमपुर में पहुँचीं और वहाँ के डाक-बँगले में भोजन कराकर साढ़े दस बजे आगे प्रस्थान के लिए तैयार हो गए। डॉक्टर साहब ने बताया कि वे बहुत थके हुए हैं और उनकी जल्दी सोने की आदत है। इस पर कैप्टन ने कहा कि डाक-बँगले में कमरा खाली नहीं है। उन्होंने बटोत में कमरा रिज़र्व किया हुआ है। इस प्रकार रात साढ़े दस बजे ऊधमपुर से रवाना होकर रात के दो बजे बटोत पहुँचे। वहाँ अढ़ाई बजे से प्रातः छः बजे तक सो सके। साढ़े सात बजे वहाँ से चलकर दोपहर के एक बजे 'काजी कुण्ड' पहुँचे। वहाँ दोपहर का भोजन किया गया और दो बजे पुनः प्रस्थान हुआ और श्रीनगर सैन्ट्रल जेल लगभग तीन बजे तक पहुँच सके। सैन्ट्रल जेल से इन तीनों बन्दियों को सुपरिण्टैंडैंट अपने साथ निशात बाग के समीप एक छोटी-सी कोठी में ले गए।

श्रीनगर में बन्दी

जहाँ तक कोठी के स्थान और वहाँ की वादी के दृश्य का सम्बन्ध है, रहने का स्थान बहुत अच्छा था। एक छोटे-से लॉन के पीछे एक मुख्य कमरा और एक छोटा-सा कमरा बगल में था। मुख्य कमरे में डॉक्टर मुखर्जी ठहराए गए और छोटे कमरे में वैद्य गुरुदत्त। डॉक्टर मुखर्जी वाले कमरे में से गुसलखाने को मार्ग था। गुसलखाने और डॉक्टर साहब के कमरे के भीतर एक छोटा-सा कमरा कपड़े आदि बदलने के लिए था। वहाँ श्री टेकचन्द शर्मा ने अपना बिस्तर लगा दिया।

बंगले के पीछे कुछ दूरी पर 'हरवन रेंज' के पहाड़ ऐसे खड़े थे मानो किसी पहाड़ी दुर्ग की दीवारें हों।

बन्दी १२ मई को चार बजे मध्याह्नोत्तर इस कोठी में पहुँचे थे। सुपरिण्टैंडैंट जेल श्रीकण्ठ सप्रु, सैण्ट्रल जेल से उनके साथ ही आए थे। कोठी में डॉक्टर अली मुहम्मद और डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट साहब भी पहुँच गए। रस्मी आवभगत के पश्चात् डॉक्टर अली मुहम्मद साहब ने डॉक्टर साहब का निरीक्षण किया। उस समय डॉक्टर मुखर्जी का रक्त-चाप १२५/९० था। डॉक्टर अली मुहम्मद ने इस पर अचम्भा प्रकट किया, जिस पर डॉक्टर मुखर्जी ने बताया कि यह विशेषता उनके परिवार-भर की है। इससे निश्चिन्त हो डॉक्टर अली मुहम्मद ने हँसकर कहा, "तब ठीक है। आप क्या खाएँगे?"

लॉन में दो छोटे-छोटे चिनार के पेड़ थे। एक कुछ बड़ा था। उसके नीचे कुर्सी लगाकर डॉक्टर मुखर्जी बैठा करते थे। उनके दूसरे दोनों साथी डॉ० साहब से यही बातचीत किया करते थे। इतना कह देना ठीक ही है कि जहाँ तक कोठी का सम्बन्ध था और जहाँ तक भोजन का प्रबन्ध था, डॉक्टर मुखर्जी को कोई विशेष कष्ट नहीं था। जो कुछ भी वे खाना चाहते थे उसका प्रबन्ध हो जाता था। श्रीनगर की विशेष परिस्थिति के कारण यदि कोई वस्तु वहाँ उपलब्ध ही न हो तो बात दूसरी है।

कोठी और बन्दियों की देखभाल के लिए एक सब-इन्स्पेक्टर पुलिस, एक हैड-कान्स्टेबल और आठ सिपाही थे। वे बारी-बारी से दिन-रात पहरा देते थे। इनके अतिरिक्त एक नौकर सेवा के लिए और एक रसोइया भी था।

भोजन का कार्यक्रम तथा दिन-चर्या इस प्रकार थी। डॉक्टर साहब प्रातः पाँच बजे उठकर शौचादि से निवृत्त हो जाते थे। छः बजे वे पन्द्रह-बीस मिनट तक लॉन में, जो लगभग पन्द्रह गज लम्बा था, भ्रमण करते थे। पश्चात् वे अपने कमरे में बैठ दुर्गा

अथवा काली का पाठ करते, फिर स्वाध्याय में लीन हो जाते थे। प्रातः आठ बजे के लगभग चाय तथा अल्पाहार होता था। अल्पाहार के पश्चात् प्रायः देश, धर्म और समाज के विषय में तीनों बन्दियों में चर्चा होती थी। यह चर्चा प्रायः मध्याह्न के भोजन के समय तक चलती थी। भोजन मध्याह्न के साढ़े बारह बजे होता था। भोजन के पश्चात् आधा घंटा हल्की बातें और मध्याह्न का आराम होता था। मध्याह्न डेढ़ से तीन बजे तक आराम के पश्चात् पुनः लॉन में चिनार के पेड़ के नीचे वे आ जाते थे, और यह समय प्रायः स्वाध्याय में व्यतीत होता था। साढ़े चार बजे सायं की चाय होती थी। इस समय डॉक्टर साहब चाय का पानी और उसमें नमक तथा नींबू का रस डालकर पिया करते थे। साथ ही बिस्कुट और कभी-कभी फल भी होते थे। चाय के समय प्रायः सुपरिण्टैंडैंट जेल श्री श्रीकंठ सप्रु आ जाया करते थे। भोजनादि की आवश्यकताएँ पूछते और अगले दिन स्वयं सब सामान लेकर आते थे।

सायंकाल चाय के पश्चात् बन्दी सुपरिण्टैंडैंट से वार्त्तालाप करते और उन्हें अपनी आवश्यकताएँ बताते। डॉक्टर साहब आवश्यक डाक का उत्तर उसी समय देते अथवा पढ़कर अगले दिन उत्तर देने के लिए रख लेते थे। सुपरिण्टैंडैंट साहब समाचारपत्र लाते थे। जेल की ओर से केवल हिन्दुस्तान टाइम्स तथा उर्दू का 'तेज' मिलता था। हिन्दुस्तान स्टैण्डर्ड वाले एक 'कॉम्प्लिमैन्टरी कापी' भेजते थे। कभी-कभी कश्मीरी समाचारपत्र 'खिदमत' भी मिल जाता था।

डाक की दुर्व्यवस्था के कारण समाचारपत्र सप्ताह में दो-तीन बार से अधिक नहीं मिल पाता था। दुर्भाग्य से जब भी किसी विशेष समाचार की प्रतीक्षा होती थी, उसी दिन दिल्ली से हवाई जहाज़ नहीं आता था, और कह दिया जाता था कि आज समाचारपत्र नहीं आया। बन्दियों की डाक भी श्री श्रीकंठ सप्रु, सुपरिण्टैंडैंट जेल, श्रीनगर से लेकर स्वयं आते थे। इस कारण जिस दिन वे नहीं आ पाते थे उस दिन डाक भी नहीं मिलती थी।

डाक की पड़ताल (censor) का प्रबन्ध सन्तोषजनक न होने से पत्रों के आने-जाने में कठिनाई होती रही। डॉक्टर साहब अपनी माता जी को बँगला भाषा में पत्र लिखते थे और पढ़ने वाला श्रीनगर में कोई न होने के कारण प्रायः पत्र तुरन्त नहीं भेजा जा सकता था। हिन्दी के पत्र भेजने में भी यही कठिनाई होती थी।

परन्तु डॉक्टर साहब के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब १९ जून को उनको एक मित्र की चिट्ठी, जिस पर श्रीनगर डाकखाने की मोहर ५ जून की लगी हुई थी, मिली। श्रीनगर डाकखाने से सैन्ट्रल जेल तक चिट्ठी पहुँचने में चौदह दिन का समय वास्तव में विस्मयकारक था। यह चिट्ठी अंग्रेजी में थी। डॉक्टर साहब को यह शिकायत रहती थी कि उनके पत्र उनके मित्रों को नहीं मिलते थे।

ऐसा प्रतीत होता है कि चिट्ठियों की देखभाल का प्रबन्ध किसी ऐसे अधिकारी के पास था, जिसको अवकाश बहुत कम था और जिसके मस्तिष्क में सैन्सर के अर्थ चिट्ठियों को गुम कर जाना भी था।

जहाँ तक वहाँ पर नियुक्त कर्मचारियों का सम्बन्ध था, प्रायः सबका व्यवहार अति सहानुभूतिपूर्ण और सेवा-भाव के साथ का था। सब कर्मचारियों और विशेष रूप में सुपरिंटैंडैंट जेल से ऐसा प्रतीत होता रहता था कि उनकी इच्छा तो डॉक्टर साहब की सेवा करने की बहुत थी, परन्तु कोई अन्य उच्च पदाधिकारी है जो उनकी इस इच्छा-पूर्ति में बाधक था। इस भावना के बहुत-से उदाहरणों में से एक यहाँ दे देना उचित रहेगा। एक दिन श्री रामनाथ चोपड़ा, इन्स्पेक्टर जनरल जेल्स, निरीक्षणार्थ आए। औपचारिक बातचीत के पश्चात् कर्नल साहब ने पूछा, "डॉक्टर साहब ! मैं आपके लिए और क्या कर सकता हूँ ?"

"यहाँ सब ठीक है। केवल मेरी प्रातः की सैर, जिसका मुझको स्वभाव है, का प्रबन्ध नहीं है।"

इस पर डॉक्टर चोपड़ा बोले, "यह तो मामूली बात है। आप पूर्व की ओर, जिधर नहर है, पुलिस की देखरेख में जा सकते हैं।"

कर्नल साहब ने सुपरिण्टैंडैंट जेल को कहा, और उन्होंने पुलिस सब-इन्स्पेक्टर को इसके लिए कह दिया। जाते समय वे सब-इन्स्पेक्टर पुलिस को कह भी गए, परन्तु जब अगले दिन डॉक्टर मुखर्जी ने चलने के लिए सब-इन्स्पेक्टर पुलिस को कहा तो सब-इन्स्पेक्टर ने कह दिया कि वह लिखित आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहा है। किन्तु लिखित आज्ञा नहीं आई। कुछ दिन पीछे डॉक्टर मुखर्जी ने सुपरिण्टैंडैंट जेल से इस विषय में पूछा, "पंडित जी, वह सैर करने के लिए स्वीकृति का क्या हुआ ?" सुपरिण्टैंडैंट की आँखें झुक गईं और वह कुछ नहीं बोले। अर्थ स्पष्ट था कि वे विवश थे। अधिकारियों ने इस बात की स्वीकृति नहीं भेजी।

समाचारपत्रों की दुर्व्यवस्था के कारण एक दिन सुपरिण्टैंडैंट ने स्वयं कहा, "आपके यहाँ रेडियो लग सकता है और आप नित्य के ताजे समाचार सुन सकते हैं।" डॉक्टर जी ने इस सुझाव का स्वागत किया, परन्तु यह बात भी सम्भव नहीं हो सकी। सुपरिण्टैंडैंट ने, जब भी रेडियो की चर्चा हुई, आँखें नीची कर लीं।

श्रीनगर के इस सब-जेल में छः सप्ताह तक डॉक्टर मुखर्जी अपने दोनों साथियों सहित रहे। इस काल में पदाधिकारियों में से सुपरिण्टैंडैंट जेल सप्ताह में पाँच-छः बार उनसे मिलने आते रहे। डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट दो बार निरीक्षणार्थ आए। पश्चात् मिलाई करने के लिए भी एक-दो बार आए। इन्स्पेक्टर जनरल ऑफ प्रिज़न्स इस काल में दो बार आए और डॉक्टर अली मुहम्मद, जब उनको बुलाया गया, लाए गए। इनके अतिरिक्त दो-तीन बार डॉक्टर प्रेमनाथ बैलाडोना का पलस्तर लगाने आए।

डॉक्टर मुखर्जी को एक पत्र द्वारा यह जान भारी हर्ष हुआ कि उनके कुछ सम्बन्धी श्रीनगर आ रहे हैं और उनसे भेंट करने का यत्न करेंगे, परन्तु इसके पश्चात् उनको इस विषय में कोई समाचार नहीं मिला। लेखक को कलकत्ता जाकर यह समाचार मिला कि वे लोग श्रीनगर गए थे और उन्होंने भेंट के लिए प्रार्थना-पत्र दिया था, परन्तु मुलाकात की स्वीकृति नहीं मिली। लेखक को यह जानकर भी विस्मय हुआ कि डॉक्टर मुखर्जी का

लड़का पटना से दिल्ली पहुँचा और उसने भारत सरकार से कश्मीर जाने के लिए परमिट माँगा। भारत सरकार ने एक सप्ताह की आनाकानी के पश्चात् परमिट देने से इन्कार कर दिया। वे आफिसर, जो परमिट देने का अधिकार रखते थे, बोले, "यदि तो आप सैर करने जाना चाहते हैं तो दो मिनट में परमिट बनाया जा सकता है; परन्तु आप अपने पिताजी से मिलने जाना चाहते हैं, इस कारण मैं परमिट जारी नहीं कर सकता।" डॉ० साहब के सुपुत्र को निराश पटना वापस लौट जाना पड़ा। श्री सरदार हुकमसिंह को भी मिलने की स्वीकृति एक मित्र के नाते नहीं दी गई। जब सरदार साहब ने कश्मीर सरकार की कुछ इच्छाओं को डॉ० मुखर्जी के पास ले जाने का जिम्मा लिया तब ही उनको भेंट करने की स्वीकृति मिली। इस प्रकार डॉ० मुखर्जी के लिए 'हैबियस कार्पस पैटीशन' करने के लिए आए श्री उमाशंकर त्रिवेदी ऐडवोकेट, भारत सुप्रीम कोर्ट को भी मिलने की स्वीकृति तब तक नहीं दी गई जब तक जम्मू तथा कश्मीर के हाईकार्ट ने पृथक् में मिलने के लिए आज्ञा नहीं दे दी।

बाहर के लोगों से भेंट के सम्बन्ध में एक हास्यास्पद भेंट का उल्लेख करना आवश्यक है। एक दिन एक साधू जिसने फटी-पुरानी गुदड़ी पहनी थी, भस्म में रमी लम्बी जटाएँ तथा मूँछ-दाढ़ी बढ़ी हुई, पाँव से नंगा, हाथ में दंड लिये, सुपरिण्टैंडैंट साहब के साथ आता दिखाई दिया। सुपरिण्टैंडैंट साहब नित्यप्रति के नियमानुसार आए थे। डॉक्टर साहब और उनके दोनों साथी चिनार के नीचे कुरसी लगाए सायंकाल की चाय की प्रतीक्षा कर रहे थे। जब ये लोग पधारे तो वे विस्मय में देखते रह गए। तब तक उनसे कोई भी बाहर का व्यक्ति भेंट नहीं कर सका था। सुपरिण्टैंडैंट ने परिचय कराया, "ये बाबा कानपुर के समीप के रहने वाले, आपसे भेंट करने आए हैं।"

"हाँ, बाबा जी ! बताइए, क्या आज्ञा है ?" डॉक्टर साहब ने मुस्कराकर पूछा।

बाबा जी बताने लगे कि उनकी साली का एक लड़का है। उसने अपने बाप को मार डाला था। उसको फाँसी का दंड हुआ था। प्रधान श्री राजेन्द्रप्रसाद जी ने दया कर दंड कम कर दिया है और आजन्म कैद की आज्ञा दे दी है। अब मैं डॉक्टर मुखर्जी की सेवा में आया हूँ कि वे उसको राय दें।

श्री डॉक्टर जी इस कथा को सुन विस्मित रह गए, और कहने लगे, "मैं कैदी हूँ। क्या राय दे सकता हूँ ? साथ ही इसमें अब राय की क्या बात है ?"

बाबा जी बेसिर-पैर की बातें करते रहे और एक घण्टा-भर मुलाकात कर सुपरिण्टैंडैंट के साथ लौट गए। डॉक्टर साहब के विस्मय का कारण यही था कि जब सरदार हुकमसिंह एम० पी० और उनके सम्बन्धियों को भेंट करने की स्वीकृति नहीं मिली तो इस बाबा को भेंट की स्वीकृति देकर कश्मीर सरकार ने उनके साथ हँसी की है अथवा अपनी मूर्खता का परिचय दिया है। इस भेंट का रहस्य समझ में नहीं आया।

उक्त घटना के सात वर्ष पश्चात् यह जानकर हर्ष हुआ कि उक्त बाबा जनसंघ के किसी कार्यकर्त्ता के पिता थे और औला-मौला बनकर यह भेंट प्राप्त कर डॉक्टर जी के दर्शन करना ही उनका उद्देश्य था।

वार्त्तालाप के मुख्य विषय

श्री डॉक्टर मुखर्जी के साथ छः सप्ताह व्यतीत करना एक ऐसा सुअवसर था जो विरले ही लोगों को जीवन के किसी अति उच्च काल में प्राप्त हो सकता है। इस काल के अन्त में जो दुर्घटना हुई वह इतनी भयंकर थी कि इस लाभ को विलीन कर गई है। इससे जो हानि हुई है वह इतनी बड़ी है कि उसके मुकाबिले में लाभ और आनन्द फीका पड़ गया है। इस पर इतना तो कहा ही जा सकता है कि जो ज्ञान इस अथाह भण्डार में से, जिसके वे स्वामी थे, मिला है, वह अपूर्व है और उसको थोड़े-से शब्दों में और सरल भाषा में लिखे बिना जी नहीं मानता।

डॉक्टर जी से उनके दोनों साथियों को अनेकानेक विषयों पर बातचीत करने का अवसर मिला और जो कुछ उनसे बातचीत द्वारा निम्न विषयों पर उनके विचार और धारणाओं को समझा, वह नीचे लिख देना उचित ही है।

श्री पटेल

श्री डॉक्टर साहब श्री वल्लभ भाई पटेल के विषय में ऐसा समझते थे कि कांग्रेस-क्षेत्रों में उन जैसा निर्भीक, बुद्धिमान, नीतिज्ञ और देश के हित की भावना से ओत-प्रोत कोई अन्य नहीं था। वे श्री पटेल को वास्तव में लौह-पुरुष मानते थे। उनके मन में भय कभी आता ही नहीं था। इस पर भी डॉक्टर मुखर्जी ने ऐसी एक-दो घटनाएँ सुनाईं जिस समय यह लौह-पुरुष भी पिघलकर मोम का पुरुष बन गया। उनमें एक घटना इस प्रकार थी। यह बात सत्य है कि श्री पटेल हृदय से चाहते थे कि पाकिस्तान को पचपन करोड़ रुपया तब तक न दिया जाय जब तक कश्मीर पर पाकिस्तानी आक्रमण समाप्त नहीं हो जाता। इस विषय पर कैबिनेट के बहुसंख्यक सदस्य उनके साथ भी थे, परन्तु महात्मा गांधी ने उनको बुलाकर पाँच मिनट के भीतर ऐसा दबाया कि वे निस्तेज, निरुत्साह और पूर्ण रूप से परास्त हो कैबिनेट में आए और स्वयं ही उन्होंने यह रकम पाकिस्तान को दे देने का प्रस्ताव किया। इसके पश्चात् वे अपनी उस दृढ़ता को कभी नहीं पा सके।

पंडित नेहरू से श्री पटेल का मतभेद चलता रहता था, परन्तु श्री पटेल ने नेहरू जी से कभी झगड़ा नहीं किया। वे महात्मा गांधी जी को वचन दे चुके थे कि वे पण्डित जी से कभी झगड़ा नहीं करेंगे। कश्मीर आदि विषयों पर पंडित नेहरू जी का व्यवहार इसी धारणा का परिणाम था।

श्री भीमराव अम्बेडकर

भारत के इने-गिने विद्वानों में एक हैं। कानून में, विशेष रूप से विधान-सम्बन्धी कानून में, आपका ज्ञान अथाह है। वह अथाह ज्ञान ही भारत के विधान में त्रुटियों का कारण बन गया है। श्री अम्बेडकर संसार-भर के प्रायः सब विधानों की श्रेष्ठता को भारत के विधान में लाना चाहते थे। इस प्रयत्न में विधान का ढाँचा ऐसा बन गया है कि अनेक स्थानों पर इसमें गम्भीर दोष आ चुके हैं। यह विधान भारत की वस्तु-स्थिति से कहीं दूर चला गया है।

इस पर भी श्री डॉक्टर मुखर्जी श्री अम्बेडकर को अपनी पार्टी में लेने के लिए उत्सुक थे। उनका कथन था कि एक बार दोनों में इस विषय में बातचीत भी हुई थी। श्री अम्बेडकर भारतीय जनसंघ के सिद्धान्तों से सहमत होते हुए भी, भारतीय जनसंघ नाम को पसन्द नहीं करते थे। श्री डॉ० मुखर्जी श्री अम्बेडकर को भारत की एक विभूति मानते थे। उनके हिन्दू-विरोधी विस्फोट को, उनके पूर्व-जीवन में हिन्दुओं से किए गए दुर्व्यवहार की प्रतिक्रिया-मात्र मानते थे। वे ऐसा मानते थे कि इससे और भी अधिक आवश्यक हो गया है कि श्री अम्बेडकर जी से आगे बढ़कर हाथ मिलाने के लिए तैयार रहना चाहिए।

श्री पं० जवाहरलाल नेहरू

वे श्री पंडित जी को अथाह शक्ति का भण्डार मानते थे। मनोद्‌गारों से ओतप्रोत, विचार किए बिना मन की भावनाओं को प्रकट करने वाले और युरोपीय वेश, विचार, वाणी से सुसज्जित भारत की गाड़ी को युरोपीय रेलवे लाइन पर ले-जाने के यत्न में लगे हैं। श्री डॉक्टर जी श्री नेहरू जी के विदेशी आदर्शों से सहमत न होते हुए भी उनके लिए हृदय में मान रखते थे। प्रायः कहते थे, क्या ही अच्छा होता, यदि श्री जवाहरलाल नेहरू की शिक्षा में कुछ थोड़ा-सा ही हिन्दुत्व विचारधारा का अंश होता!

पंडित नेहरू जहाँ सुप्रबन्ध के लोभ में, प्रिवैन्टिव डिटैन्शन ऐक्ट के समर्थक बन गए थे, वहाँ सैक्युलर पंथ के मोह में इस्लाम के पक्षपाती हो गए। इसी प्रकार अन्तर्राष्ट्रीयता में ख्याति के विचार से देशहित छोड़ बैठे, वैसे ही कांग्रेस की रक्षा के लिए प्रजातन्त्र के मूल सिद्धान्तों पर कुठाराघात कर बैठे हैं। इस प्रकार मनोद्‌गारों में बह जाने वाले भारत के महान् नेता न्याय-पथ से हट गए हैं।

इस पर भी श्री नेहरू जी के लिए डॉक्टर मुखर्जी विशेष प्रेम व आदर रखते थे।

ऑल इंडिया नेशनल कांग्रेस

श्री डॉक्टर मुखर्जी का विचार था कि इस संस्था के जीवन-काल को चार भागों में बाँटा जा सकता है। एक काल जो १९०७ से पहले का था, दूसरा १९०७ से १९१९

तक और तीसरा १९१९ से १९४७ तक, तथा अन्तिम १९४७ के पश्चात् का काल।

१९०७ से पूर्व के काल में कांग्रेस नौकरियों, पदवियों इत्यादि की माँग करने वाली संस्था थी। 'बंग-भंग' आन्दोलन तथा 'अभिनव भारत' नामी महाराष्ट्रियन आन्दोलन और 'भारत माता' नामक पंजाब के आन्दोलन के कारण देश में 'गरम दल' नामी आन्दोलन का प्रभाव कांग्रेस पर होना आरम्भ हो गया था। कांग्रेस में संघर्ष आरम्भ हुआ। संघर्ष का श्रीगणेश सूरत में हुआ। अभी भी नरम दल का प्रभाव अधिक रहा। नरम दल के लोगों में ऐसे बहुत थे जो लोकमान्य तिलक के कैद होने पर प्रसन्न हुए थे। वे समझते थे कि इससे कांग्रेस बच गई है। इस समय अभिनव भारत के नेता श्री बी० डी० सावरकर अण्डमान जेल भेज दिए गए। बंगाल के नेता श्री अरविन्द घोष तथा श्री विपिनचन्द्र पाल इत्यादि पकड़ लिये गए। पंजाब में 'भारत माता' के सदस्य स० अजीतसिंह, श्री पिण्डी दास, श्री लालचन्द फलक इत्यादि या तो देश छोड़ गए या कैद हो गए। इस पर कांग्रेस पर नरम दल वालों का प्रभुत्व १९१५ तक चलता रहा। तब तक कांग्रेस के अधिवेशनों के आरम्भ में 'भारत सम्राट' अर्थात् इंग्लैंड के राजा के चिरंजीव होने का प्रस्ताव पास होता रहा। १९१५ में भी गरम दल वालों का प्रभाव नरम दल वालों के बराबर तो हो गया, परन्तु उनसे बढ़ा नहीं। इस कारण गरम दल वालों ने मुसलमानों के लिए पृथक् 'निर्वाचन क्षेत्रों' तथा 'सूचियों' की बात मान नरम दल वालों को परास्त करने का यत्न किया। मुसलमान और गरम दल के कुछ लोग मिल गए और उन्होंने कांग्रेस पर अधिकार जमा लिया।

१९१५ से लेकर १९१९ तक कांग्रेस पर श्री लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक और श्री विपिनचन्द्र पाल का प्रभाव रहा। इस समय एक नवीन विचारधारा, महात्मा गांधी के नेतृत्व में, देश में अवतीर्ण हुई और उसने कांग्रेस पर अधिकार जमा लिया। महात्मा गांधी की विचार-मीमांसा डॉ० मुखर्जी इस प्रकार समझते थे। हिन्दू और मुसलमान दोनों देश में रहने वाले होने के कारण एकत्रित हो सम्मिलित प्रयास करें तो स्वराज्य प्राप्त हो सकता है। मुसलमानों का स्वराज्य-आन्दोलन में सहयोग प्राप्त करने के लिए हिन्दुओं को त्याग करना चाहिए। अपने दृष्टिकोण को मानने के लिए अपने को हानि पहुँचने देना, और दूसरों पर आघात न करना, महात्मा जी की नीति के कुछ अंग थे। मुस्लिम तुष्टि और अहिंसा महात्मा जी की नीति के ये दो मुख्य स्तम्भ थे।

डॉक्टर जी का यह दृढ़ मत था कि भारत को राजनीतिक स्वतंत्रता, लगभग पचास प्रतिशत, १९१९ से पूर्व ही मिल चुकी थी। शेष उन्नति १९४५ के पीछे हुई। १९१९ से लेकर १९४५ तक देश की राजनीतिक अवस्था में कुछ भी प्रगति नहीं हुई। उनका विचार था कि इस काल में अवनति ही हुई थी। १९२२ में भारत के वाइसराय ने भारत को डोमिनियन स्टेटस देने की पेशकश की थी। परन्तु महात्मा जी ने तथा तत्कालीन कांग्रेस के नेताओं ने, इसको नहीं माना। वे खलीफा को टर्की में वापस लाने को भारत में डोमिनियन स्टेटस पर उपमा देते थे। १९३५ का विधान न मानकर कांग्रेस ने पाकिस्तान

की नींव रखी। स्ट्रैफर्ड क्रिप्स ने १९४२ में पाकिस्तान का सिद्धान्त उपस्थित किया था और कांग्रेस ने इसको मान लिया था। क्रिप्स-योजना को कांग्रेस ने इस कारण अस्वीकार किया कि उससे तुरन्त कांग्रेस-अधिकारियों को कुछ नहीं मिलता था। १९४४ में महात्मा जी ने मुसलमानों की माँग—पाकिस्तान को स्पष्ट रूप में मान लिया था। १९४५ में हिन्दू और मुसलमानों में समता स्वीकार कर देश में दो जातियों की उपस्थिति मानी और १९४७ में पाकिस्तान स्वीकार कर लिया। यदि पाकिस्तान बनना देशहित-विरोधी है तो यह १९१९ से १९४७ तक की कांग्रेस-नीति का परिणाम होने से महात्मा जी की नीति से हुआ।

१९४७ से पूर्व श्री सुभाषचन्द्र बोस की इण्डियन नेशनल आर्मी का प्रयोग हो चुका था और बम्बई, जबलपुर, कलकत्ता इत्यादि स्थानों पर फौजी बलवे हो चुके थे। इनका प्रभाव तथा अमेरिका का युद्ध के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में अधिक और अधिक हस्तक्षेप और इंग्लैंड का दुर्बल स्थिति में होना, स्वराज्य मिलने में मुख्य कारण बन गए। महात्मा गांधी के आन्दोलन से देश में दो बातों में भारी क्षति पहुँची। एक तो मुसलमानों को जब अनियमित सुविधाओं पर सुविधाएँ मिलने लगीं, तब वे देश और कांग्रेस से अधिक और अधिक माँग करने लगे। ये माँगें अभी तक समाप्त नहीं हुईं। मुसलमान अब भी अपने सहयोग का मूल्य माँगते हैं।

महात्मा जी की नीति का दूसरा परिणाम यह हुआ कि देश के योग्य व्यक्ति पृष्ठ-भूमि में चले गए और सर्वथा अयोग्य तथा स्वार्थी लोग आगे आ गए। वर्तमान कांग्रेस में ऐसे लोगों का आना केवल महात्मा जी और उनके अधीन कांग्रेस की इस नीति का परिणाम था। अपने दृष्टिकोण को दूसरे पर अंकित करने के लिए अपने को हानि पहुँचने देना एक दूषित नीति थी।

महात्मा गांधी महात्मा होते हुए अंडे-मुर्गी खाने वाले, झूठ बोलने वाले और प्रत्येक प्रकार के अनाचार करने वालों की जेब में बैठे रहे। राम के भक्त होते हुए राम का नाम देश से मिटाने वालों के आग्रह को मानते रहे। 'रघुपति राघव राजा राम पतित पावन सीता राम' का नित्य पाठ करने वाले होते हुए भी, दशरथ-पुत्र राम की कथा को कल्पना घोषित करते रहे। हिन्दू धर्म के अनन्य भक्त होते हुए, हिन्दी-हिन्दू-हिन्दुस्थान की भावना के विरोधी बन गए। जनता में पाकिस्तान का विरोध करते हुए पाकिस्तान स्वीकार करने वालों की रक्षा कांग्रेस कमेटी में और देश में करते रहे। कुछ मुसलमानों की हत्या हो जाने पर, हिन्दुओं की घोर निन्दा करने वाले, हिन्दुओं के हत्यारों को छुरे चलाने, बम्ब बनाने इत्यादि के शिक्षा-केन्द्र मस्जिदों की रक्षा के निमित्त व्रत रखने वाले हो गए।

इस प्रकार कांग्रेस १९२२ में मिलते स्वराज्य को धकेलकर १९४७ तक ले-जाने वाली होने पर मुसलमानों को प्रोत्साहन देकर देश-विभाजन में साधन बन गई।

१९४७ के पश्चात् कांग्रेस एक मजहब का रूप धारण कर एक पक्षपातपूर्ण, जनता

की स्वतंत्रता का गला घोंटने वाली संस्था बन गई है। देश-हित से ऊपर कांग्रेस-हित को मानने वाली संस्था जहाँ १९४७ से पूर्व देश के स्वराज्य को पीछे और पीछे धकेलती रही थी, वहाँ अब अयोग्य, रिश्वतखोर, देश-हित को स्वार्थ पर बलिदान करने वालों का एक दल बन गई है।

क्रान्तिकारी संस्थाएँ

क्रान्तिकारियों के प्रति डॉक्टर जी पूर्ण भक्ति रखते थे। यद्यपि वे ऐसा नहीं समझते थे कि केवल उनके प्रयत्नों से ही स्वराज्य-प्राप्ति में पूर्ण सफलता मिली है, तो भी उनसे 'देश के नवयुवकों में उत्साह, स्फूर्ति और देश-भक्ति की भावना जागृत हुई' मानते थे। स्वतंत्रता के आन्दोलन में इनका भी एक सम्माननीय स्थान था। देश के लिए निर्भीकता का पाठ जो इन लोगों ने पढ़ाया है, वह अहिंसावाद नहीं पढ़ा सकता। अहिंसावाद में ढोंग और धोखा-धड़ी आ जाना स्वाभाविक है, परन्तु क्रान्तिकारी दल के लोगों को तो सदा जान हथेली पर रखकर ही कार्य करना पड़ता था। जब कोई क्रान्तिकारी सफल हो जाता तो जहाँ देश-भर के नवयुवकों में उत्साह की भावना दौड़ जाती थी, वहाँ विदेशी नृशंस शासकों के दिल दहल उठते थे।

क्रान्तिकारियों के प्रयत्न से स्वराज्य-प्राप्ति की ओर देश ने प्रगति की थी अथवा नहीं? इस प्रश्न पर डॉक्टर साहब के विचार इस प्रकार थे—प्रत्येक ऐसा कार्य, जिससे देश में उत्साह, निर्भीकता तथा त्याग की भावना बढ़ती थी उससे देश स्वतंत्रता की ओर प्रगति करता था। इसमें सन्देह नहीं कि १९०९ के और १९१९ के सुधार क्रान्तिकारियों के प्रयासों का फल थे। वस्तुतः देश में स्वराज्य-प्राप्ति का श्रेय नब्बे प्रतिशत से अधिक क्रान्तिकारियों को है और शेष दस प्रतिशत उन लोगों को, जो ब्रिटिश सरकार के साथ कूटनीति से बातचीत करने वाले थे। १९१९ से पूर्व क्रान्तिकारी हिंसात्मक आन्दोलन चलाते थे और नरम दल के लोग ब्रिटिश सरकार से कूटनीति से बातचीत करने वाले थे। इस प्रकार दोनों के प्रयत्न से उत्तरोत्तर राजनीतिक प्रगति होती जाती थी। १९१९ के पश्चात् नरम और गरम दोनों दल वालों का स्थान महात्मा गांधी ने लेने का यत्न किया। साथ ही हिंसात्मक प्रवृत्तियों की निन्दा उग्र होने से कुछ काल के लिए क्रान्तिकारी प्रवृत्तियों को चुप रहना पड़ा। परन्तु जब असहयोग-आन्दोलन असफल रहा तो पुनः क्रान्तिकारियों ने अपना आन्दोलन चलाया। यह क्रान्तिकारी आन्दोलन अधिक संगठित और सुदृढ़ था। परन्तु अभी पनप भी नहीं पाया था कि महात्मा जी का नमक-सत्याग्रह आन्दोलन चल पड़ा। इसके भी असफल होने पर पुनः क्रान्तिकारी आन्दोलन प्रारम्भ हुआ। इस आन्दोलन का एक रूप श्री सुभाषचन्द्र बोस का देश से भाग, जर्मनी तथा जापान से मिलकर भारत पर सशस्त्र सैनिक आक्रमण करना था। इस समय महात्मा जी द्वारा श्री सुभाष बोस की घोर निन्दा भी जनता को धोखा नहीं दे सकी।

१९१९ से पूर्व नरम दल के लोग स्वयं कोई देशव्यापी आन्दोलन चला नहीं

सकते थे। आन्दोलन तो क्रान्तिकारियों और गरम दल के लोगों में रहता था और नरम दल के लोग ब्रिटिश सरकार के साथ कूटनीति से वार्त्तालाप कर प्रति दस वर्ष में कुछ अधिकार प्राप्त करते जाते थे। १९१९ के पश्चात् महात्मा जी, जो नरम दल की उपज थे, स्वयं आन्दोलन चलाने लगे। क्रान्तिकारियों की ख्याति का लाभ उनको मिला, परन्तु वे कूटनीतिक बातचीत करने के अयोग्य हो गए। परिणाम यह हुआ कि १९१९ से लेकर १९४६ तक कूटनीतिक बातचीत करने की सामर्थ्य का कोई नेता नहीं रहा। १९४६ के पश्चात् राजनीति में कूटनीतिक बातचीत करने का स्थान पण्डित नेहरू और श्री पटेल ने ले लिया। इस पर भी जो प्रभाव आई० एन० ए० के आक्रमण तथा बम्बई, कलकत्ता, जबलपुर और कराची के फौजी बलवों ने उत्पन्न किया, उसका पूरा लाभ ये लोग नहीं ले सके। इसमें कारण यह था कि वे लोग, अंग्रेजों के मन पर किस बात का प्रभाव पड़ा था, जान नहीं सके। ये लोग मुहम्मद अली जिन्ना को प्रसन्न करने में लगे रहे।

राष्ट्रभाषा

इस विषय में श्री डॉक्टर साहब रूस की नीति को पसन्द करते थे। उनका विचार यह था कि देश की एक राष्ट्रभाषा हिन्दी, देवनागरी लिपि में, होनी चाहिए। साथ ही वे यह चाहते थे कि क्षेत्रीय भाषाओं को भी स्थान मिलना चाहिए। शिक्षा का माध्यम क्षेत्रीय भाषा होना चाहिए। हिन्दी केवल-मात्र एक ऐसी भाषा हो जिसमें भिन्न प्रान्तों के रहने वाले परस्पर बातचीत कर सकें। मातृभाषा अर्थात् क्षेत्रीय भाषा को प्रारम्भिक शिक्षा-काल से लेकर दसवीं कक्षा तक अवश्य पढ़ाया जाए। हिन्दी पाँचवीं अथवा छठी श्रेणी से आरम्भ की जाए और प्रान्तों के अतिरिक्त, जहाँ यह क्षेत्रीय भाषा भी है, दो वर्ष पढ़ाकर समाप्त कर दी जाए। कचहरी की तथा सरकारी भाषा भी क्षेत्रीय भाषा हो। हिन्दी सरकारी कार्यालयों की भाषा न हो। केन्द्र में तो सरकारी कार्य हिन्दी तथा अंग्रेजी में हो। अंग्रेजी अभी लॉ-कोर्ट में चले। इन विचारों के रखते हुए भी वे यह चाहते थे कि देश में एक भाषा होनी आवश्यक है। इसलिए एक सतत यत्न करने की आवश्यकता को वे मानते थे। यत्न के विषय में वे कहते थे कि देश में एक भाषा करने के लिए सबसे प्रथम प्रयास लिपि का एक होना है। संस्कृत-साहित्य का देवनागरी लिपि से सम्बन्ध होने के कारण इसको ही देश की एकमात्र लिपि होने के योग्य समझते थे।

इस ओर दूसरा यत्न वे इस प्रकार मानते थे कि एक बृहत् हिन्दी शब्दकोष बनना चाहिए, जिसमें सब क्षेत्रीय भाषाओं के मुख्य-मुख्य शब्द आ जाने चाहिएँ। यह कोष ही सब भाषाओं के एकीकरण में सफल होगा। इस विकास में यदि सरकार हाथ बढ़ाए तो बीस-तीस वर्ष में हम राष्ट्रभाषा की समस्या को सुलझाने में बहुत सीमा तक आगे बढ़ सकते हैं। डॉक्टर साहब इस बात का स्वप्न देखते थे कि इस महान् देश में यहाँ की सब प्रमुख भाषाओं को फलने-फूलने का अवसर मिलेगा।

देश का आर्थिक संगठन

इस विषय में डॉक्टर जी के विचार बहुत सीमा तक समाजवादी थे। वे यह तो समझते थे कि एक सीमा से अधिक राष्ट्रीयकरण देश के लिए हानिकर है। वे यह भी मानते थे कि निजी प्रयत्न और प्रयास द्वारा दस्तकारी और उद्योग-धन्धों के चलाने में देश का हित है, परन्तु वे इस बात पर अविचल थे कि व्यक्ति की आय एक सीमा से ऊपर नहीं होनी चाहिए और न ही एक सीमा से कम। उनका विचार था कि न्यूनतम आय और अधिकतम आय में १ : २० की तुलना हो सकती है। जहाँ तक सरकारी और अर्द्ध-सरकारी नौकरों का सम्बन्ध है, वेतन में यह तुलना सुगमता से लाई जा सकती है। परन्तु प्राइवेट कम्पनियों और कारखानों में इस विषय में प्रबन्ध करना अधिक कठिन है। इस पर भी उनका विचार था कि ऐसा होना चाहिए। ऐसा करने के उपाय और मार्ग ढूँढे जा सकते हैं। इसके लिए 'इनकम टैक्स' एक साधन है। मज़दूरों के लिए 'वैलफेयर महकमे' इस ओर कुछ सीमा तक सहायता दे सकते हैं। बिक्री के भावों पर नियन्त्रण भी इस विषय में सहायक है। मजदूरों को बोनस देने की प्रथा भी इस ओर संकेत करती है। वे चाहते थे कि अभी कम-से-कम आय एक सौ रुपया मासिक होनी चाहिए और अधिक-से-अधिक आय दो सहस्र रुपया मासिक।

शिक्षा

शिक्षा के विषय में आदर्श बात तो वे यह मानते थे कि पूर्ण शिक्षा निःशुल्क होनी चाहिए और योग्यता ही इस बात का प्रमाण होना चाहिए कि उच्च शिक्षा किसको मिले। समान अवसर के अर्थ यह कदापि नहीं हो सकते कि अयोग्यों को नौकरियाँ और शिक्षा दी जाए। यद्यपि वर्तमान परीक्षाओं की पद्धति उनको पसन्द नहीं थी, इस पर भी जब तक मनुष्य योग्यता पहचानने की इससे उत्तम विधि नहीं जान लेता, तब तक इस विधि से ही यह निश्चय किया जाए कि उच्च शिक्षा के लिए कौन प्रवेश पा सके।

उनका विचार था कि अभी राज्य के पास इतना धन नहीं कि सब युवकों और युवतियों की शिक्षा का भार वह उठा सके। इस कारण उनका फार्मूला यह था कि निर्धनों को अपनी योग्यतानुसार शिक्षा प्राप्त करने में धनाभाव बाधा नहीं डाल सके। न ही धन प्रचुर मात्रा में होने से कोई अयोग्य उच्च शिक्षा प्राप्त करने में योग्य हो।

उनका यह भी मत था कि साधारण शिक्षा के पश्चात् उद्योग-धन्धों की शिक्षा का प्रबन्ध होना चाहिए और इसमें भर्ती उसी सीमा तक और ऐसे ढंग से होनी चाहिए कि जिससे देश को जिस-जिस प्रकार के जितने योग्य व्यक्ति चाहिएँ उतने ही तैयार हो सकें। शेष को नए कामों में भर्ती किया जाए। उद्देश्य यह है कि न तो किसी उद्योग में सुयोग्यों की न्यूनता रहे, न ही भीड़।

बेकारी

बेकारी और शिक्षा का परस्पर सम्बन्ध है। यदि शिक्षा उचित ढंग की हो तो बेकारी कम हो सकती है। कुछ व्यवसाय ऐसे हैं जिनमें योग्य-अयोग्य सब जाना चाहते हैं, जैसे वकालत का व्यवसाय। अतः देश में पेशेवर लोगों का बनाना योजना के अनुसार होना चाहिए। जाति को जितने डॉक्टर आदि चाहिएँ उतने ही प्रतिवर्ष तैयार होने चाहिएँ।

परन्तु बेकारी केवल-मात्र इस योजना पर चलने से ही दूर नहीं हो सकती। व्यक्ति की आवश्यकताएँ बढ़ाने से और फिर उन आवश्यकताओं को देश के लोगों से ही पूरा कर सकने की योजना होनी चाहिए। उदाहरण के रूप में देशवासियों की भोजन-सामग्री, वस्त्र और मकान, इस सबकी आवश्यकता को बढ़ाना और फिर उसके उत्पादन का प्रबन्ध देश में करना। इसके पश्चात् सुख-शृंगार की सामग्री की माँग को बढ़ाना और फिर देश में उनके उत्पादन को बढ़ाना। इस पर भी यदि बेकारी हो तो मनुष्य के स्वास्थ्य-प्रद मनोरंजन का सामान उत्पन्न करना और उसका प्रयोग सिखाना। इस प्रकार ये और अन्य, बेकारी दूर करने के कई उपाय हैं। सीमित परिवार-आयोजन के वे पक्षपाती थे। सन्तानोत्पत्ति कम करने के कृत्रिम उपायों के स्थान पर ब्रह्मचर्य-पालन के वे पक्षपाती थे।

घरेलू दस्तकारियों का विकास, सहकारी बैंकों का खोलना, और योग्य दस्तकारों को सरमाया उपलब्ध कराना, घरेलू दस्तकारी का बड़े-बड़े कारखानों में समन्वय इत्यादि अन्य विषय भी श्री डॉ० मुखर्जी के मन में स्पष्ट रूप में अंकित थे, जिनके द्वारा देश में बेकारी दूर की जा सकती थी।

यह समझते हुए भी कि आज के संसार में अन्य देशों से व्यापार बन्द नहीं किया जा सकता, डॉक्टर जी यह मानते थे कि किसी देश की शक्ति आत्म-निर्भरता पर स्थित है। हमें अपने देश में भोजन, वस्त्र और सिर ढाँपने को मकान के लिए तो कभी भी किसी पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। रही अन्य आवश्यक वस्तुएँ। उनमें भी हमें दूसरे देशों की आवश्यकता की वस्तुओं को इतनी मात्रा में पैदा करना और बनाना चाहिए कि हमारे पास विदेशों से अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ क्रय करने के लिए प्रचुर मात्रा में धन आ जाय।

बड़ी-बड़ी दस्तकारियों और तिजारतों को चलाने के लिए 'कोआपरेटिव सोसाइटियाँ' बनानी आवश्यक हैं।

कृषि

कृषकों के पास इतनी भूमि होनी चाहिए कि प्रत्येक परिवार को भूमि से लगभग १०० रुपया मासिक की आय हो सके, जिससे वही आय में १ : २० की तुलना बन

सके। इसके लिए आपका विचार था कि एक परिवार में जिसमें बाल-बच्चों सहित पाँच व्यक्ति हों, लगभग ७ एकड़ भूमि आवश्यक होगी। सिवाय कोआपरेटिव सोसाइटी के प्रति परिवार के लिए इतनी भूमि से अधिक नहीं होनी चाहिए। जमींदारी, जिसमें एक व्यक्ति इतनी भूमि का स्वामी हो जो वह स्वयं न जोत सके, नहीं रहनी चाहिए। अभिप्राय यह है कि कोई भी व्यक्ति दूसरे की मेहनत पर पल न सके।

जहाँ तक सम्भव हो, खेती-बाड़ी करने के लिए हमको उन साधनों पर निर्भर नहीं रहना चाहिए जिनको हम अपने देश में बना अथवा मरम्मत नहीं कर सकते। ट्रैक्टर आदि का प्रयोग तभी उचित हो सकता है, जब हम इनको अपने देश में बनाना जानते हों। इसके साथ ही ट्रैक्टर जो पेट्रोल से चलते हैं, जिनके लिए हम विदेशों पर निर्भर हैं, उचित नहीं हैं। इससे हम किसी समय भी भूखे मारे जा सकते हैं।

भारत में कृषि का घना सम्बन्ध गोधन से है। डॉक्टर साहब का यह दृढ़ मत था कि देश में गोहत्या बन्द हो जानी चाहिए। इससे जो हानि हो रही है वह अकथनीय है। जो युक्तियाँ इस विषय में कानून बनने के विरुद्ध दी जाती हैं वे मिथ्या और भ्रममूलक हैं। गोधन की वृद्धि और उसकी श्रेष्ठता, हत्या बन्द किए बिना सम्भव नहीं। ऐसा उनका मत था।

भारतीय संस्कृति

संस्कृति का अर्थ वह आचरण है जो किसी जाति का संस्कारों के कारण बनता है। आचरण के बनने में इतिहास-साहित्य, महापुरुषों के जीवन तथा ऐतिहासिक अथवा धार्मिक पर्व मानते थे। भारत में ये सब बातें मुख्यतः हिन्दुओं के साथ सम्बन्ध रखती हैं। अतएव भारतीय संस्कृति हिन्दू संस्कृति है और हिन्दू संस्कृति वह है जो वैदिक काल से लेकर आज तक आधार-रूप में एकरस चली आती है। इस विषय में डॉक्टर साहब के विचार अति विशिष्ट व विशाल थे और उन्होंने इसमें कुछ बातें बताई थीं, जो उनके विचार में भारतीय संस्कृति के स्तम्भ हैं—

(१) पुनर्जन्म का विचार, (२) कर्म मीमांसा, (३) समानाधिकार, (४) विद्वानों के लिए मान एवं श्रद्धा का भाव, (५) व्यक्ति और समाज के अधिकारों में सन्तुलन, (६) समान अवसर, (७) जीवन का अधिकार, (८) विचार स्वातन्त्र्य, (९) चरित्र।

खान-पान, वस्त्र-वेश, भाषा, ये जो सभ्यता के अंग हैं, उक्त नौ आधारों से प्रेरणा पाकर ही बनते हैं। अर्थात् ये सब अथवा रसोई-चूल्हा संस्कृति नहीं, ये बाह्य रूप हैं, जो देशकाल के अनुसार परिवर्तनशील हैं।

वर्ण-व्यवस्था तथा जात-पात

इस विषय में उनका मत था कि प्राचीन काल में वर्ण-व्यवस्था गुण, कर्म व स्वभाव के अनुसार थी। परन्तु मध्यकाल में यह व्यवस्था जन्म से मानी जाने लगी।

इससे ही जात-पात का आविष्कार हुआ था। आज ऐसा समय आ गया है कि जन्म से न जात-पात रही है न वर्ण-व्यवस्था। इसको पुनः गुण-कर्म-स्वभाव से बनाने के लिए कठिनाइयाँ हैं जिनको हटाना सम्भव है। इस कारण वे चाहते थे कि एक बार तो समाज को वर्ण-रहित और जाति-पाति-विहीन कर देना चाहिए। पुनः जब व्यवस्था बनेगी तो गुण-कर्म-स्वभाव से स्वयमेव ही यह बन जाएगी।

यों तो छः सप्ताह में इतने विषयों पर इतना वार्त्तालाप हुआ कि उनको लिखने के लिए एक बृहत् ग्रन्थ की रचना हो सकती है। यहाँ पर केवल उन विषयों पर जो आज एक विशेष महत्त्व रखते हैं, श्री डॉक्टर जी के विचार, संक्षिप्त रूप में, और वे भी इस प्रकार जिस प्रकार लेखक समझ पाया था, लिखे हैं। डॉक्टर साहब एक धर्मनिष्ठ, साहसी और हृदय से हिन्दू भावना रखने वाले व्यक्ति थे। कभी भी उन्होंने देश तथा जाति के हित में स्वार्थ को बाधा नहीं बनने दिया।

भारतीय जनसंघ के बनने में उद्देश्य

डॉक्टर साहब के हृदय में यह बात स्पष्ट थी कि यह राजनीतिक दल किसी जाति अथवा धर्म का विरोध करने के लिए नहीं बनाया गया। इसका उद्देश्य नकारात्मक नहीं है। वे यह मानते थे कि देश एक सहस्र वर्ष के उपरान्त स्वतंत्र हुआ है और इस प्रकार राजनीतिक रूप में संगठित देश केवल चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य, अशोक तथा हर्ष के काल में हो सका था। इस स्वतंत्रता तथा एकता को बनाए रखने के उद्देश्य से ही ऐसे दल के निर्माण की आवश्यकता हुई। जाति-पाति के भेद-भाव, प्रान्तीयता की संकीर्णता को पनपने से रोकने के लिए ही यह प्रयास है। ऐसे देशद्रोहियों से जो देश को विदेशियों के हाथ बेचने के लिए उद्यत हैं, बचाने और देश में मातृभूमि के प्रति भक्ति की भावना उत्पन्न करने के लिए इस दल की आवश्यकता थी। यदि कहीं ऐसा न हो सका तो देश पुनः विदेशियों की दासता में फँस जावेगा। संसार में जो मत्स्य-न्याय चल रहा है उससे बचने तथा संसार को बचाने के लिए भारत का एक रहना और शक्ति-सम्पन्न होना अत्यावश्यक है। इस भावना से भारतीय जनसंघ की स्थापना की गई थी।

भारत के साथ प्रेम का अर्थ हिन्दू भावना और संस्कृति से प्रेम है। इस संस्कृति के प्रेम से ही सर्व-धर्म की रक्षा सम्भव है। अन्य किसी संस्कृति में विचार-स्वातन्त्र्य की इतनी छूट नहीं मिलती। इस कारण देश में न्याय-धर्म और स्वतंत्रता के नाते ऐसे दल की आवश्यकता थी जो इसके लिए कार्य करे। अतएव भारतीय जनसंघ की स्थापना हुई।

थोपी गई मृत्यु

डॉक्टर साहब और उनके साथी १२ मई १९५३ को श्रीनगर में बन्दीगृह में रखने के लिए ले-जाए गए। १७ मई को डॉक्टर साहब को हल्का ज्वर और टाँग में पीड़ा हुई। डॉक्टर साहब ने इसका उल्लेख नहीं किया। जब लेखक ने उनसे पूछा कि वे लँगड़ाकर चलते प्रतीत होते हैं, तब उन्होंने बताया कि पिछली रात से उनकी दाईं टाँग में पीड़ा हो रही है। उसी दिन जेल-सुपरिण्टैंडैंट को सूचना दी गई। वे प्रायः सायं चार बजे आया करते थे। अगले दिन वे डॉ० अली मुहम्मद को साथ लेकर आए और निरीक्षण कर औषधि लिख गए। सायंकाल एक अन्य डॉक्टर प्रेमनाथ दर आए और बैलाडोना का प्लास्टर लगा गए। इससे डॉक्टर मुखर्जी को लाभ प्रतीत होने लगा। एक मिक्स्चर पीने के लिए भी दिया गया था। उसकी कुछ मात्राएँ लेने के पश्चात् ज्वर जाता रहा, परन्तु बैलाडोना प्लास्टर प्रति दूसरे दिन बदला गया और तीन बार लगाने के उपरान्त डॉक्टर साहब ठीक हो गए।

डॉक्टर साहब कुछ दिन स्वस्थ रहे। एक दिन इन्स्पेक्टर जनरल ऑफ प्रिज़न्स कर्नल रामनाथ चोपड़ा आये और बातचीत में डॉक्टर साहब ने कहा, "मुझको प्रतिदिन प्रातःकाल एक घण्टा-भर घूमने का अभ्यास है। यह भ्रमण इस बँगले में नहीं हो सकता। यही कारण है कि दिन-प्रतिदिन मेरी भूख कम होती जाती है।"

कर्नल चोपड़ा ने कहा, "इसका प्रबन्ध तो हो सकता है।" उन्होंने सुपरिण्टैंडैंट जेल को, जो वहाँ पर उपस्थित थे, कहा, "इनको दो पुलिस कान्स्टेबलों के साथ ऊपर नहर के किनारे घूमने के लिए ले-जाया जाए।"

इस पर सुपरिण्टैंडैंट जेल ने सब-इन्स्पेक्टर पुलिस को आज्ञा दी तो उसने लिखित आज्ञा माँगी। सुपरिण्टैंडैंट ने आज्ञा भेजने का वचन दिया परन्तु वह आज्ञा नहीं आई। ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रस्ताव को कश्मीर सरकार ने अस्वीकार कर दिया।

इसके पश्चात् चार जून को पुनः टाँग में पीड़ा प्रारम्भ हो गई और पुनः डॉक्टर को बुलाना पड़ा। नियम यह था कि सायं चार बजे सुपरिण्टैंडैंट जेल आते तो हम उनको बताते और अगले दिन वे किसी समय डॉक्टर को लेकर आते और फिर किसी अन्य समय उसी दिन अथवा उससे भी अगले दिन दवाई आती। जेल का डॉक्टर आता और चिकित्सा प्रारम्भ हो पाती। इस बार फिर डॉक्टर अली मुहम्मद आए और चिकित्सा प्रारम्भ हुई। डॉक्टर ने पुनः बैलाडोना प्लास्टर लगाने के लिए कहा। इस बार रोग उतना

उग्र नहीं था जितना पहली बार, और वे चार दिन में ठीक हो गए। इसके पश्चात् पुनः कर्नल चोपड़ा, इन्स्पेक्टर जनरल ऑफ प्रिज़न्स आए और कुशल-समाचार पूछ गए। वे पुस्तकें इत्यादि पढ़ने के लिए भेजा करते थे। स्वास्थ्य ऐसा ही चलता रहा। टाँग की पीड़ा के दूसरे आक्रमण के पश्चात् डॉक्टर मुखर्जी की भूख और भी कम हो रही थी। इस कारण जब सरदार हुकमसिंह जी डॉक्टर जी से मिलने आए तो डॉक्टर साहब ने शेष वार्तालाप के अतिरिक्त अपनी भूख और सैर करने की आज्ञा पर बात भी कही। ऐसा प्रतीत होता है कि सरदार हुकमसिंह जी ने इस बात का उल्लेख शेख अब्दुल्ला से किया और उसने इस विषय में लगभग सोलह जून को यह आज्ञा दी कि डॉक्टर मुखर्जी को एक घण्टा नित्य सैर के लिए ले-जाया जाय। १७ जून को यह आज्ञा श्रीनगर के डी० एम० ने टेलीफोन द्वारा सुपरिण्टैंडैंट जेल को दी और उन्होंने उसी दिन सब-इन्स्पेक्टर पुलिस से, जो हमारी देख-रेख के लिए नियुक्त था, कहा। परन्तु उसने पुनः लिखित आज्ञा माँगी। इस पर आज्ञा भेजने की बात पुनः कही गई। यह २० जून को सायंकाल आई, जब डॉक्टर साहब बीमार हो चुके थे और घूमने के योग्य नहीं रहे थे।

१९ और २० जून की रात को डॉक्टर साहब की पीठ में पीड़ा आरम्भ हुई और साथ ही ज्वर हो गया। बीस जून को प्रातःकाल ज्वर देखा गया तो ९९.२ था; पीड़ा अधिक थी। इस कारण सुपरिण्टैंडैंट को टेलीफोन से, जो हमारे सब-जेल से कुछ ही अन्तर पर, वाटर वर्क्स में था, सूचना भेजी गई। वे उसी दिन दोपहर के साढ़े ग्यारह बजे के लगभग अली मुहम्मद के साथ आए और डॉक्टर साहब का निरीक्षण हुआ। डॉक्टर अली मुहम्मद ने बताया कि डॉक्टर मुखर्जी को 'ड्राई प्ल्यूरिसी' है। उनके रक्त की परीक्षा होनी चाहिए, जो अस्पताल में ले-जाकर ही हो सकती है। इस पर उन्होंने 'स्ट्रैप्टोमाइसीन' का इंजेक्शन लगाने को कहा और कुछ पाउडर जिसका नुस्खा हमें बताया नहीं गया, देने को लिख दिया। श्री डॉक्टर मुखर्जी ने 'स्ट्रैप्टोमाइसीन' के विषय में कहा कि मेरे पारिवारिक चिकित्सक ने यह कहा था कि यह औषधि मेरे अनुकूल नहीं बैठेगी। इस पर डॉक्टर अली मुहम्मद ने पूछा, "यह बात कब की है?"

डॉक्टर मुखर्जी ने बताया, "सन् १९४६ की।" इस पर डॉक्टर अली मुहम्मद बोले, "यह बात पुरानी है और अब हम इस औषधि के विषय में बहुत-कुछ जानते हैं।"

डॉक्टर अली मुहम्मद चले गए और सायं चार बजे के लगभग जेल के डॉक्टर पंडित अमरनाथ रैना आए और इंजेक्शन और पाउडर देकर चले गए। पाउडर खाने से पीठ की पीड़ा में कमी आ जाती थी। इससे डॉ० मुखर्जी को सन्देह हुआ कि कहीं ये एस्परीन की भाँति की कोई वस्तु न हो। अगले दिन २१ जून को डॉक्टर अली मुहम्मद तो आए नहीं, परन्तु जेल का डॉक्टर आया और स्ट्रैप्टोमाइसीन का एक और इंजेक्शन दे गया। साथ ही छः पाउडर पिछले दिन वाले और दे गया। लेखक ने इस डॉक्टर से पूछा, "क्या ये पाउडर एस्परीन के हैं?" डॉक्टर ने हँसकर कहा, "आप चिन्ता क्यों करते हैं? डॉक्टर अली मुहम्मद साहब एक योग्य व्यक्ति हैं।"

पिछले दिन ज्वर अधिक-से-अधिक १०१.२ तक गया था, इस दिन अर्थात् २१ जून को ज्वर प्रातःकाल ९८.२ और सायंकाल अधिक-से-अधिक १०० तक रहा। पीड़ा पिछले दिन से कम रही। अब डॉक्टर साहब लेट सकते थे और उनको दिन के समय कुछ घंटे नींद भी आई। तीन पाउडर २० जून को खाए गए थे। तीन पाउडर २१ जून तारीख को लिये गए। सायंकाल डॉक्टर मुखर्जी बहुत प्रसन्न प्रतीत होते थे। दोनों दिन उन्होंने सब्जी का यूष और ओवलटीन व चाय ही ली थी। इस दिन रात के ग्यारह बजे के लगभग अचानक पीठ में पीड़ा बढ़ गई और उन्होंने एक पाउडर और ले लिया। इसके पश्चात् उनको नींद आ गई। डॉक्टर साहब के कथानानुसार २२ जून को प्रातःकाल ४ बजे के लगभग उनकी नींद खुली, उस समय उनकी छाती में हृद्-क्षेत्र में पीड़ा थी और उनकी साँस रुकती प्रतीत होती थी। आधा घंटा तक तो वे यह समझते रहे कि स्वयं ठीक हो जावेंगे, परन्तु जब कष्ट बढ़ता गया और उनकी आँखों के सामने अँधेरा आने लगा, तब उन्होंने लेखक को जगवाया और अपनी अवस्था बतलाई। नाड़ी पकड़ी नहीं जाती थी। ठण्डा पसीना प्रचुर मात्रा में आ रहा था और शरीर ठंडा पड़ गया था। समीप कोई औषधि न होने से कठिनाई बहुत थी। रसोईघर में मोटी इलायची, दारचीनी और लवंग पड़े थे। इन तीनों को लेकर पीसा गया और मिश्री मिलाकर चूसने को दिया गया। इससे डॉक्टर जी को लाभ हुआ और पाँच मिनट में ही पसीना बन्द हो गया। तब धीरे-धीरे नाड़ी चलती प्रतीत होने लगी। आधे घण्टे में डॉक्टर जी ने बताया कि उनकी दृष्टि ठीक हो गई है, हँफनी बन्द हो गई है और हृद्-पीड़ा भी लगभग समाप्त हो गई है। इस समय शरीर का तापमान ९७ था।

सवा पाँच बजे प्रातः सुपरिण्टैंडैंट को टेलीफोन किया गया और उन्हें डॉक्टर को ल्कर आने के लिए कहा गया। डॉक्टर अली मुहम्मद प्रातः साढ़े सात बजे आए। तब तक डॉक्टर मुखर्जी प्रत्यक्ष रूप में बिलकुल ठीक हो चुके थे। डॉक्टर अली मुहम्मद ने रक्तचाप देखा। यह १००/८० था और शरीर का तापमान ९८° था। इस समय उनको दो सी० सी० कोरामीन का इन्जेक्शन दिया गया। डॉक्टर अली मुहम्मद ने सुपरिण्टैंडैंट जेल को, जो साथ आया था, कहा कि डॉक्टर मुखर्जी को तुरन्त नर्सिंग होम में ले-जाना चाहिए। सुपरिण्टैंडैंट ने जब इस बात को डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट से कहने की बात कही तो डॉक्टर के दोनों साथियों ने अपने लिए भी उनके साथ नर्सिंग होम चलने की स्वीकृति माँगी। सुपरिण्टैंडैंट ने इन्कार करते हुए कहा, "कुछ आवश्यकता नहीं। न ही आप लोगों के लिए वहाँ खाने का प्रबन्ध हो सकता है।" डॉक्टर अली मुहम्मद ने भी कहा, "I understand your anxiety, but you don't worry. He will be in better hands there." (मैं आपकी चिन्ता का कारण समझता हूँ, परन्तु विश्वास रखें कि डॉक्टर मुखर्जी वहाँ अधिक सुरक्षित हाथों में रहेंगे) डॉक्टर अली मुहम्मद ने जाने से पूर्व एम्बुलेंस कार लाने के लिए कहा, और चले गए। इस समय जेल के डॉक्टर पं० अमरनाथ रैना को छोड़ गए थे।

साढ़े ग्यारह बजे के लगभग जेल के सुपरिण्टैंडैंट एक टैक्सी-गाड़ी लेकर आए और डॉक्टर मुखर्जी को बैठाकर ले गए। दिन-भर हम डॉक्टर मुखर्जी के स्वास्थ्य-समाचार की प्रतीक्षा करते रहे। सायंकाल सात बजे के लगभग टेलीफोन द्वारा जेल सुपरिण्टैंडैंट का संदेश आया कि डॉक्टर मुखर्जी पहले से अच्छे हैं। उसी सायंकाल श्री उमाशंकर त्रिवेदी एम० पी०, जो डॉक्टर मुखर्जी का मुकद्दमा जम्मू तथा कश्मीर हाईकोर्ट में करने के लिए श्रीनगर में उपस्थित थे, अस्पताल में मिलने गए। वे डॉक्टर मुखर्जी के पास ६ बजे से साढ़े सात बजे तक रहे। उनका कहना है कि यद्यपि डॉक्टर साहब कुछ दुर्बल प्रतीत होते थे, परन्तु वे बातचीत ठीक कर रहे थे। उन्होंने कुछ पत्रों पर हस्ताक्षर भी किए। श्री त्रिवेदी जी ने पूछा कि वे उनके घरवालों को सूचना दे दें? डॉक्टर जी ने बताया कि उन्होंने एक तार अपने भाई को और एक तार बहन को भेजा है।

यह कहा जाता है कि रात के ग्यारह बजे डॉक्टर मुखर्जी की अवस्था बिगड़ी। और डॉक्टर ने उनको एक इंजेक्शन दिया, परन्तु अवस्था बिगड़ती गई।

वैद्य गुरुदत्त और दूसरे साथी, श्री टेकचन्द शर्मा तथा पं० प्रेमनाथ डोगरा जो बँगले में, जिसको सब-जेल बनाया गया था, पीछे रह गए थे, सबको प्रातः पौने चार बजे जगाया गया और सुपरिण्टैंडैंट जेल से पूछने पर कि क्या बात है, बताया गया कि उनको अस्पताल चलना है। कारण पूछने पर उन्होंने बताया कि उन्हें पता नहीं। डी० एम० ने टेलीफोन से कहा कि शीघ्र चलना चाहिए। चिन्ता और अनिश्चित अवस्था में वे साढ़े चार बजे अस्पताल पहुँचे और पहुँचने पर श्री त्रिवेदी जी ने उन्हें बताया कि डॉक्टर साहब का देहान्त हो गया है।

यह इतनी भारी वोट थी और इससे सब इतने स्तब्ध हुए कि आधा घण्टा-भर तो समझ ही नहीं आई कि क्या किया जाए। लगभग पाँच बजे डॉक्टर मुखर्जी के अन्तिम दर्शन के लिए उस कमरे में गए जहाँ उनका शव रखा था। अंतिम दर्शन के पश्चात् जब बाहर आ रहे थे तो श्री टेकचन्द शर्मा ने नर्स से, जो पीछे-पीछे उस कमरे में गई थी और पीछे-पीछे ही बाहर आ रही थी, पूछा, 'डॉक्टर साहब की मृत्यु किस समय हुई?' तो उसने बताया, 'रात के ढाई बजे।'

जम्मू व कश्मीर हाईकोर्ट में मुकद्दमा

जिस ढंग से डॉक्टर जी को बन्दी बनाया गया था, उससे डॉक्टर जी को किंचित् भी आशा नहीं थी कि वे हाईकोर्ट में छूट सकते हैं। परन्तु कुछ लोग थे जो इस विषय में यत्न करना चाहते थे। कुछ ऐसे भी लोग थे जो यह समझते थे कि डॉक्टर साहब ने जो तार शेख साहब को अम्बाले से भेजा था, उसकी उपस्थिति में कश्मीर सरकार उनको कैद नहीं कर सकती। इस विचार के लोगों में श्री उमाशंकर त्रिवेदी भी थे। उन्होंने मई मास के अन्तिम सप्ताह में कश्मीर सरकार के पास यह लिखा कि वे डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी से कानूनी परामर्श करना चाहते हैं, अतएव उनको श्रीनगर जाने और उनसे मिलने की स्वीकृति दी जाए। इस प्रार्थना पर विचार कर उत्तर देने में कश्मीर सरकार ने बहुत समय लिया। ९ जून को श्री त्रिवेदी जी को श्रीनगर आकर डॉक्टर साहब से मिलने की स्वीकृति दी गई। परन्तु सूचना, जो तार द्वारा दी गई थी, गलत पते पर भेजने के कारण श्री त्रिवेदी जी को नहीं मिली, और श्री त्रिवेदी जी ९ जून के स्थान पर १२ जून को श्रीनगर पहुँच सके। इस चार दिन की देरी में भारत सरकार का भी हाथ था। त्रिवेदी जी को २४ घण्टे पठानकोट में रहना पड़ा। कश्मीर सरकार से श्रीनगर जाने की स्वीकृति मिलने पर भी भारत सरकार ने परमिट देने में आनाकानी की। इसके पश्चात् एक दिन पूरा लगा जब श्री त्रिवेदी को डॉक्टर मुखर्जी से भेंट का प्रबन्ध हो सका। १२ जून को सायंकाल ४ बजे के लगभग त्रिवेदी जी डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के साथ वहाँ पधारे और जब भेंट के लिए डॉक्टर मुखर्जी तथा वे पृथक् जाने लगे तो डी० एम० ने त्रिवेदी जी को एक ओर ले-जाकर कहा, "मुझको आज्ञा हुई है कि आपकी डॉक्टर मुखर्जी से बातचीत मेरे सामने उस भाषा में हो जो मैं समझ सकता हूँ।"

श्री त्रिवेदी जी ने कह दिया, "मैं डॉक्टर मुखर्जी को बता देना चाहता हूँ कि मैं इस प्रकार भेंट नहीं करूँगा।" जब डॉक्टर जी को भी इस आज्ञा के विषय में बताया गया तो उन्होंने भी अपने वकील के नाते त्रिवेदी जी से मिलने के लिए इन्कार कर दिया। परिणाम यह हुआ कि कानूनी राय नहीं हो सकी।

श्री त्रिवेदी जी निराश हो लौटे। वे चाहते थे कि डॉक्टर साहब के छुड़ाने का यत्न किया जाए। वे डॉक्टर साहब से पैटीशन करवाना चाहते थे, परन्तु उक्त कथित अवस्था में डॉक्टर साहब पैटीशन पर हस्ताक्षर नहीं कर सके। डॉक्टर साहब का कोई सम्बन्धी अथवा मित्र जो जम्मू अथवा कश्मीर का नागरिक हो, यह पैटीशन कर सकता था, परन्तु

ऐसा व्यक्ति मिले कैसे? दो दिन के प्रयत्न पर एक युवक श्री देवकी प्रसाद मिल गया जो डॉक्टर साहब के मित्र के नाते पैटीशन करने को तैयार हो गया। १५ जून को पैटीशन जम्मू व कश्मीर हाईकोर्ट में की गई। पहली तारीख १६ जून को पड़ी। इस दिन सबसे प्रथम श्री त्रिवेदी जी ने बन्दी से राय न कर सकने की बात कही। इस पर कश्मीर व जम्मू राज्य के एडवोकेट जनरल से जज ने पूछा कि क्यों प्राइवेट में इन्टरव्यू की स्वीकृति नहीं मिली? एडवोकेट जनरल ने जो कुछ कहा वह उत्तर सन्तोषजनक न मान जस्टिस क्लिम ने आज्ञा दे दी कि पृथक् में डॉक्टर साहब से राय करने का अवसर मिलना चाहिए! परिणामस्वरूप १७ तारीख को दिन के आठ बजे डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट श्री त्रिवेदी जी को लेकर आए। साढ़े तीन घंटा तक बातचीत हुई और कागजात तैयार किए गए।

१८ जून को पुनः हाईकोर्ट में पेशी हुई और त्रिवेदी जी ने डॉक्टर साहब का मुकद्दमा किया। १९ को भी त्रिवेदी जी ने बहस की। २२ तारीख को श्री त्रिवेदी जी डॉक्टर साहब से प्रायः दस बजे पुनः मिलने आए। इस समय डॉक्टर साहब को प्रथम दिल का दौरा पड़ चुका था। लगभग आधा घंटा बातचीत कर और डॉक्टर साहब के दोनों साथियों की पैटीशनों पर हस्ताक्षर करवाकर वे चले गए। २२ तारीख को त्रिवेदी जी ने अन्तिम बहस की और जज ने निर्णय देने के लिए २३ तारीख निश्चय की, परन्तु दुर्भाग्य यह हुआ कि उस समय से पूर्व ही श्री डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी का स्वर्गवास हो गया।

कलकत्ता को

वैद्य गुरुदत अपने साथियों, श्री टेकचन्द शर्मा तथा पंडित प्रेमनाथ डोगरा के साथ अस्पताल में साढ़े चार बजे पहुँचे और वहाँ दो घंटा-भर ठहरने के पश्चात् उनको पुनः जेल ले-जाया गया। वहाँ से सामान लेकर पुनः साढ़े आठ बजे अस्पताल लाया गया—उस समय डॉक्टर साहब का शव अस्पताल की ड्योढ़ी में लाया जाकर, एम्बुलैंस गाड़ी में रखा जा चुका था। शव के साथ पहले तो तीन व्यक्तियों के जाने का प्रबन्ध था—श्री उमाशंकर जी त्रिवेदी, वैद्य गुरुदत्त तथा श्री टेकचन्द शर्मा, परन्तु पीछे दिल्ली तक पण्डित प्रेमनाथ डोगरा जी के जाने का प्रबन्ध भी कर दिया गया। फौजी हवाई जहाज़ में रखकर शव को दिल्ली ले-जाना था, परन्तु दिल्ली सरकार की आज्ञानुसार शव वाला हवाई जहाज़ अम्बाला ले-जाने का विचार हो गया। इसी झगड़े में साढ़े आठ से दस बज गए। अन्त में निर्णय हुआ और दस बजकर चालीस मिनट पर हवाई जहाज़ उठ सका।

साढ़े बारह बजे के लगभग हम जालन्धर के ऊपर से गुज़रे और अम्बाला की ओर जा रहे थे कि दिल्ली से आज्ञा आ गई कि हमें जालन्धर ही उतरना होगा। परन्तु जब जालन्धर लौटे, तो नीचे उतरने की स्वीकृति नहीं मिली। दो बजे तक हवाई जहाज़ जालन्धर के ऊपर चक्कर काटता रहा। पश्चात् समाचार मिला कि आदमपुर हवाई अड्डे पर उतरना होगा। जहाज़ वहाँ उतरा तो एक आई० एन० ए० का जहाज़ पहले से ही वहाँ उपस्थित था। ऐसा प्रतीत होता है कि इतने समय तक जो हमको हवा में लटकते रखा गया वह इस आई० एन० ए० हवाई जहाज़ की प्रतीक्षा में था। श्री प्रेमनाथ जी डोगरा को तो दिल्ली जाना था और हमको बताया गया कि हमें दिल्ली नहीं ले-जाया जाएगा। इस कारण श्री डोगरा जी वहीं उतर गए और शव को फौजी जहाज़ से निकाल आई० एन० ए० के जहाज़ में रखा गया। पश्चात् कलकत्ता की ओर चल पड़े। लगभग पाँच बजे कानपुर के एक फौजी अड्डे पर उतरे, वहाँ जहाज़ ने पैट्रोल लिया और बीस मिनट के पश्चात् वहाँ से पुनः उड़कर आठ बजकर पचास मिनट पर कलकत्ता डम-डम के अड्डे पर उतर पड़े।

हवाई जहाज़ के भूमि पर उतरते ही लोगों की भीड़ का सागर उमड़ पड़ा। नेतागण, सम्बन्धी और जन-साधारण की इतनी भीड़ थी कि शव को एयरोड्रोम से निकालने में लगभग एक घण्टा लग गया। पूर्ण नगर में कोलाहल मचा हुआ था। उस

पूर्ण मार्ग पर, जिससे डॉक्टर साहब के शव को उनके पारिवारिक गृह तक ले-जाना था, मध्याह्न अढ़ाई बजे से लोगों की भीड़ जमकर बैठी प्रतीक्षा कर रही थी। लगभग दस मील के मार्ग पर तिल रखने को स्थान नहीं था। शव की यात्रा हवाई अड्डे से साढ़े नौ बजे प्रारम्भ हुई थी और वह ७७ आशुतोष लेन प्रातः पाँच बजे के लगभग समाप्त हुई। शोक, विषाद, क्रोध तथा उत्तेजना से भरा हुआ लाखों लोगों का जन-समूह रात-भर जागता रहा जिससे अपने प्रिय नेता के अन्तिम दर्शन कर सके।

२४ जून को दिन के ग्यारह बजे अन्तिम यात्रा ७७ आशुतोष मुखर्जी रोड से प्रारम्भ हुई और पाँच मील के लम्बे मार्ग पर अर्थी का जुलूस, मार्ग के दोनों ओर खड़े अपार जन-समूह की पंक्तियों-पर-पंक्तियों में से तथा मकानों की छतों, खिड़कियों और छज्जों पर प्रतीक्षा करते हुए असंख्य लोगों को कलकत्ता के प्रिय नेता बंगाल-केसरी डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी के दर्शन देते हुए, निकाला गया। तीन बजे मध्याह्नोत्तर अर्थी श्मशान घाट पर पहुँची और दाह-संस्कार हिन्दू-पद्धति के अनुसार किया गया।

दुर्घटना

मृत्यु तो जब कर्मफल से जीवन समाप्त हो जाता है, तब होती है। ऐसी एक धारणा है, परन्तु यदि यह सत्य है तो हत्यारे को दण्ड क्यों दिया जाता है? इसका अर्थ स्पष्ट है कि मृत्यु में असामयिक और अस्वाभाविक कारण भी होते हैं। ऐसी अस्वाभाविक तथा असामयिक परिस्थिति को उत्पन्न करने वाला कोई मनुष्य हो तो उसको अपराधी माना जाता है। यह अपराध जब जान-बूझकर किसी स्वार्थ के हेतु किया जाए तो घोर पाप माना जाता है। इस मीमांसा से श्री डॉक्टर श्यामाप्रसाद मुखर्जी की मृत्यु पर विचार अनिवार्य है। भारत माता का यह वीर, धीमान, प्रतिभाशाली और कर्मनिष्ठ पुत्र इस अकाल मृत्यु का ग्रास हुआ और देश-भर के लोगों की माँग करने पर भी कि इसकी जाँच की जाय, भारत सरकार और जम्मू तथा कश्मीर सरकार इसके लिए तैयार नहीं हुई। माँग धीरे-धीरे शान्त हो सकती है और अधिकारी-वर्ग इस मामले को मिट गया मान संतोष मान सकते हैं, परन्तु यदि इस संसार में कोई ऐसा भी नियम है, जिससे न्याय और सत्य की प्रतिष्ठा होती है, तो इस प्रकार असत्यतुष्टि का व्यवहार कोई अन्य भयंकर परिणाम भी उत्पन्न कर सकता है।

इस विषय में यदि कोई निष्पक्ष रूप में जाँच हो सकी तो उसके परिणामों का हम पूर्वाभास नहीं कर सकते। क्या-क्या और किन-किन घटनाओं अथवा रहस्यों का उद्‌घाटन होगा, कहना कठिन है। सम्भव है कि जनता की धारणा कि कोई अनियमित व्यवहार (Foul play) किया गया है, असत्य सिद्ध हो, परन्तु जो घटना-चक्र घटा है, उनकी जो कड़ियाँ जनता को विदित हैं, उनके प्रकाश में जो परिणाम निकल सकता है, वही हम निकाल रहे हैं।

शेख अब्दुला और जम्मू-कश्मीर की सरकार ने वक्तव्य दिए। श्री नेहरू जी ने भी एक वक्तव्य दिया। ये दोनों उक्त दुर्घटना में एक पक्ष रखते हैं। इस कारण उनका कथन लोग स्वीकार करेंगे अथवा नहीं, सन्देहात्मक बात है। इस विषय में निष्पक्ष जाँच तो वही लोग कर सकते हैं, जो इस दुर्घटना से स्वयं किसी प्रकार का भी सम्बन्ध न रखते हों।

हम निम्न प्रश्न उक्त घटना के विषय में उपस्थित करते हैं, और समझते हैं कि उक्त वृत्तान्त पढ़ने पर पाठक स्वयं उत्तर ढूँढ लेंगे—

१. आम चुनावों के भीतर, यदि कोई नवीन समस्या अथवा प्राचीन समस्या

का नवीन रूप उत्पन्न हो जाए तो क्या जनता को अथवा किसी राजनीतिक दल को यह अधिकार नहीं कि वह उस प्रश्न को जनता के सम्मुख रखे और लोगों के मनों को प्रेरणा देने के लिए उस पर आन्दोलन करे?

२. जब तक यह आन्दोलन शान्तिमय हो तब तक सरकार उसे बन्द करने का क्या अधिकार रखती है? क्या शान्तिमय जलसों, जुलूसों और प्रदर्शनों को धारा १४४ के अधीन बन्द करना प्रजातंत्रवाद का गला घोंटना नहीं?

३. किसी आन्दोलन को बिना प्रमाण साम्प्रदायिक कहना और वह भी देश के प्रधान मन्त्री द्वारा, कहाँ तक क्षम्य है? प्रजा-परिषद् की माँगों में कौन-सी माँग साम्प्रदायिक थी?

४. देश के एक भाग को देश से पृथक् होने का अधिकार इस कारण देना कि वहाँ मुसलमानों की संख्या अधिक है, क्या साम्प्रदायिकता नहीं?

५. कोई हिन्दू अपने हिन्दू होने पर गौरव करता हुआ क्या राजनीतिक बात नहीं कर सकता? यदि ऐसा है तो मौलाना आजाद जमीयत-उल्-उलेमा का रुक्न होते हुए कैसे राजनीतिक नेता हो सकते हैं?

६. क्या डिफैन्स मिनिस्ट्री से लगाया परमिट-सिस्टम देश में राजनीतिक दलों के विरोध और उनके देश में भ्रमण पर लागू करना न्यायोचित है?

७. क्या यह सत्य नहीं कि सोशलिस्टों, कांग्रेसियों और कम्युनिस्टों को अपनी पार्टियों के प्रतिनिधि होते हुए जम्मू-कश्मीर जाने की स्वीकृति दी गई थी? केवल भारतीय जनसंघ, तथा हिन्दू महासभा के प्रतिनिधियों को ही वहाँ क्यों नहीं जाने दिया गया?

८. क्या भारतीय जनसंघ के विरुद्ध कोई ऐसा आरोप है कि इस संस्था ने फौजी रहस्यों में हस्तक्षेप किया है? यदि नहीं तो इनको क्यों वहाँ जाने की स्वीकृति नहीं दी गई?

९. पं० जवाहरलाल जी ने पार्लियामैंट में कहा था कि जम्मू-कश्मीर का सम्बन्ध भारत से शत-प्रतिशत हो गया है। तो यह जनमत-संग्रह की बात अभी क्यों चल रही है? जो बात निश्चय हो चुकी है उस पर पुनः जनमत-संग्रह के क्या अर्थ हैं?

१०. परमिट-सिस्टम भारत सरकार ने अपनी फौजी कार्यवाही की रक्षा के लिए लगाया था। पाकिस्तान सरकार ने ऐसा कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया तो इस परमिट-सिस्टम का अभिप्राय भारतीयों को कश्मीर जाने से रोकना है क्या?

११. क्या फौजी रहस्यों की रक्षा भारतीयों से ही है और पाकिस्तानियों से नहीं?

१२. यदि यह परमिट-सिस्टम भारत के नागरिकों के विरुद्ध उनके अधिकारों को छीनने के लिए था, तो यह होम मिनिस्ट्री के अधीन क्यों नहीं ?

१३. पंडित नेहरू जी कई बार कह चुके हैं कि कश्मीर के लोग अपने भाग्य का निर्णय स्वयं करेंगे। तो उनको नागाओं को गालियाँ देने का क्या अधिकार है ? क्या वे ऐसा अधिकार देश के अन्य भागों को भी देंगे ? यदि नहीं तो कश्मीरियों में क्या विशेषता है ?

१४. यदि नेहरू सरकार यह मानती है कि परमिट-सिस्टम न्यायोचित है और आवश्यक भी है, तो फिर डॉक्टर मुखर्जी को पठानकोट में ही क्यों नहीं रोका गया और भारतवर्ष में ही क्यों बन्दी नहीं बनाया गया ?

१५. डॉक्टर मुखर्जी के कश्मीर सरकार द्वारा बन्दी बना लिये जाने पर भारत सरकार ने इसको कैसा समझा था ? कश्मीर सरकार का कौन-सा कानून श्री मुखर्जी ने भंग किया था, जब वे रावी के पुल पर से जम्मू में जाना चाहते थे ? इस विषय में यदि कोई पत्र-व्यवहार अथवा तारों में प्रश्नोत्तर हुए थे तो वे क्यों अभी तक प्रकाशित नहीं हुए ?

१६. भारत के एक प्रिय प्रतिष्ठित नागरिक के भारत से बाहर, जहाँ भारत के न्यायालय का अधिकार नहीं, एक राज्य द्वारा बन्दी बना लिये जाने पर भारत सरकार ने उसको छुड़ाने का यत्न क्यों नहीं किया ?

१७. भारत सरकार ने श्री डॉक्टर मुखर्जी की संदिग्ध परिस्थितियों में मृत्यु हो जाने पर जाँच की माँग की है अथवा नहीं ? यदि नहीं की तो क्यों नहीं की ?

१८. श्री शेख अब्दुल्ला के वक्तव्य में जो यह कहा गया है कि वे श्री पंडित नेहरू जी के विलायत से लौटने की प्रतीक्षा कर रहे थे, इस कथन के क्या अर्थ हैं ?

१९. क्या इसके यह अर्थ नहीं कि पंडित जवाहरलाल जी नेहरू के कहने पर ही कश्मीर सरकार ने डॉक्टर मुखर्जी को पकड़ा था ?

२०. क्या इसके यह अर्थ नहीं कि पंडित जवाहरलाल जी ने यदि डॉक्टर मुखर्जी को पकड़ने के लिए कहा था तो अपनी निजी जिम्मेदारी से कहा था और भारत के प्रधान मन्त्री के नाते नहीं कहा था। यदि पं० जवाहरलाल जी की भारत के प्रधान मन्त्री के नाते प्रतीक्षा हो रही थी तो भारत सरकार का जो भी प्रतिनिधि अथवा अधिकारी उस समय भारत में था, उससे क्यों राय नहीं ली गई ?

२१. क्या कश्मीर सरकार ने श्री डॉक्टर मुखर्जी के रोगी होने की कोई सूचना भारत सरकार को दी थी ? यदि नहीं तो भारत सरकार ने इस विषय में कश्मीर सरकार को पूछा है कि क्यों नहीं दी गई ?

२२. श्री पंडित नेहरू जी ने कहा कि प्रजा परिषद् के आन्दोलन से कश्मीर राज्य में विरोधी पक्ष ने भी आन्दोलन किया है। प्रजा परिषद् का आन्दोलन कश्मीर को भारत में सम्मिलित करने के लिए है। क्या पंडित जी यह कहेंगे कि यह आन्दोलन कश्मीर को किसके साथ विलय करने के लिए है? क्या यह आन्दोलन पहले नहीं था? क्या इसके प्रारम्भ होने की सूचना जनता को और सरकार को पहले दी नहीं गई? प्लैबिसाइट का विरोध क्या इसी विरोधी दल की उपस्थिति के कारण नहीं किया गया था?

२३. जहाँ तक चिकित्सा का सम्बन्ध है इस विषय में निष्पक्ष डॉक्टरों से जाँच में, भारत सरकार ने क्या पग उठाया है? और यदि नहीं उठाया तो क्यों नहीं?